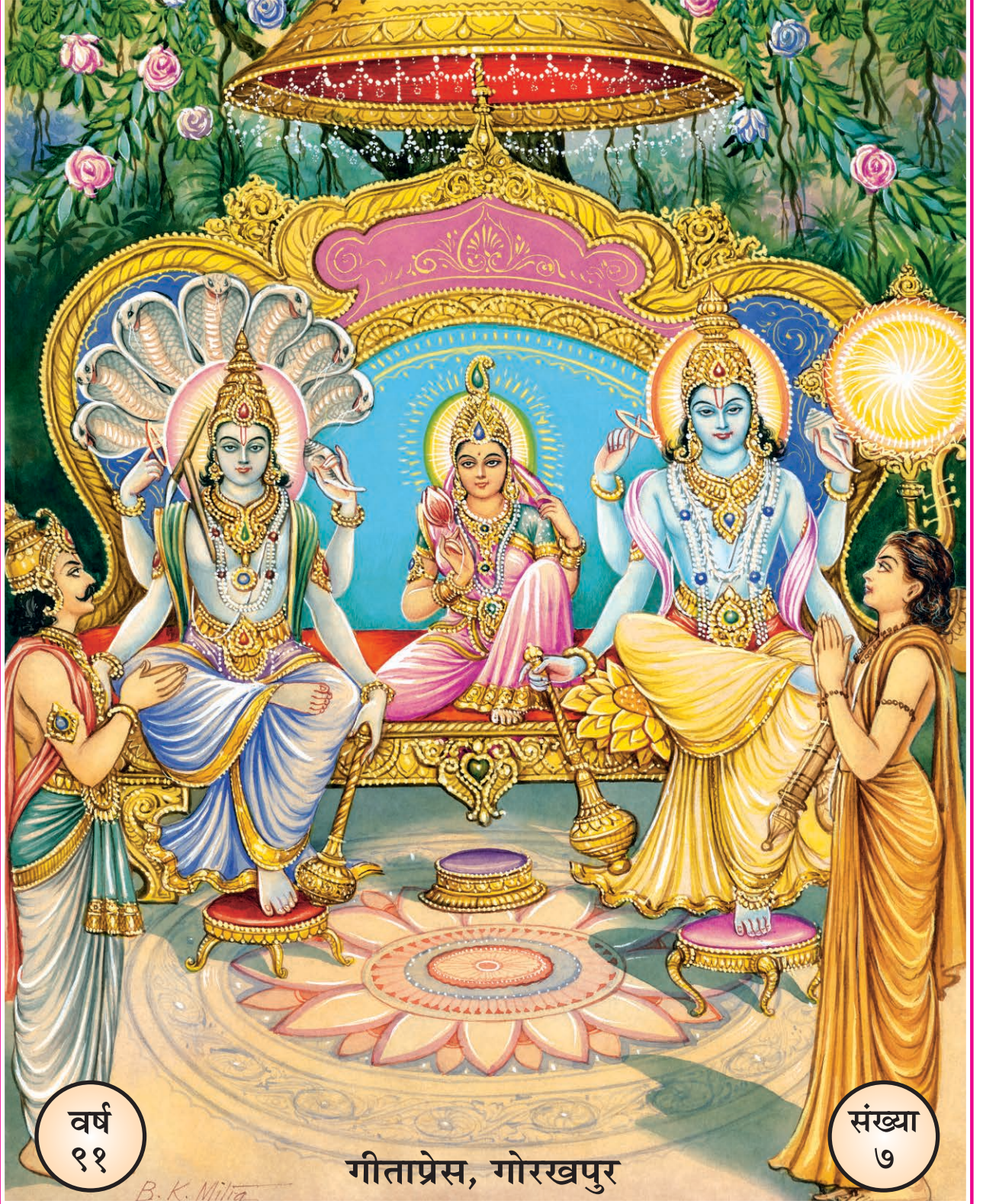


* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

मूल्य १० रुपये



वर्ष
९९

गीताप्रेस, गोरखपुर

संख्या
७

भगवान् जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!



श्रीकृष्णको झूला झुलाती श्रीराधाजी

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते । पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ॥



कल्याण

वन्दे वन्दनतुष्टमानसमतिप्रेमप्रियं प्रेमदं पूर्णं पूर्णकरं प्रपूर्णनिखिलैश्वर्यैकवासं शिवम् ।
सत्यं सत्यमयं त्रिसत्यविभवं सत्यप्रियं सत्यदं विष्णुब्रह्मनुतं स्वकीयकृपयोपात्ताकृतिं शङ्करम् ॥

वर्ष
९१

गोरखपुर, सौर श्रावण, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, जुलाई २०१७ ई०

संख्या
७

पूर्ण संख्या १०८८

‘झुलावति स्यामा स्याम-कुमार’

झुलावति स्यामा स्याम-कुमार ।

हेम-रत्न-निर्मित झूला पर, रुचिर रेसमी डोरी डार ॥
मन अति मुदित झुलावति गोरी, सह न सकति स्त्रम तन सुकुमार ।
सोहत ललित कपोल-भाल पर स्वेद-बिंदु स्त्रम-जनित अपार ॥
कूदि परे लखि स्त्रमित श्रीमती, झट झूले का कर परिहार ।
बैठारी कर-कमल पकरि कै निज कर, उर भरि अतिसय प्यार ॥
कोमल कुसुम-कली मंडित सिंहासन पर, प्रिय अमित उदार ।
निज पट-अंचल पौंछे निज कर स्वेद-वारि-कन नंद-कुमार ॥
ललितादिक सखियन बैठारे जीवन-धन करि अति मनुहार ।
आदरसहित मधुर बानी सौं, करन लगीं सौरभित बयार ॥

[पद-रत्नाकर]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण २, १५, ०००)

कल्याण, सौर श्रावण, वि० सं० २०७४, श्रीकृष्ण-सं० ५२४३, जुलाई २०१७ ई०

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या
१- 'झुलावति स्यामा स्याम-कुमार'	३	१३- हनुमान्जीके द्वादशनाम और उनके पाठका माहात्म्य	२४
२- कल्याण	५	१४- निखारिये अपने व्यक्तित्वको (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)	२५
३- भक्त राजा इन्द्रद्युम्न [आवरणचित्र-परिचय]	६	१५- कोटि-कोटि नाम तेरे [कविता] (श्रीमती डॉ० उर्मिलाजी किशोर)	२६
४- भगवदाश्रयसे लोक-परलोकका कल्याण (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	७	१६- द्वादश ज्योतिर्लिंगोंके अर्चा-विग्रह [ज्योतिर्लिंग-परिचय]	२७
५- सत्यका स्वरूप (मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी महाराज) [प्रेषक—श्रीअमृतलालजी गुप्ता]	९	१७- स्मृति ही है अन्तिम समयकी साधना (डॉ० श्रीभीकमचन्द्रजी प्रजापति)	२८
६- सत्संगका प्रभाव (श्रीभागवतप्रसादजी पाण्डेय)	११	१८- नाथपरम्पराके सिद्धसंत योगिराज गम्भीरनाथ [संतचरित] (श्रीरामलालजी श्रीवास्तव)	३२
७- दुःखनाशके अमोघ उपाय (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) ...	१२	१९- बाबा गम्भीरनाथजीके वचनामृत	३८
८- आध्यात्मिक जीवनकी सफलताका उपाय (ब्रह्मलीन परमहंस स्वामी श्रीदयानन्द 'गिरि' जी महाराज) [प्रेषक—प्रो० श्रीज्ञानचन्द्रजी गर्ग]	१५	२०- भारतमें गायका महत्त्व (श्रीरामलालजी गुप्त)	३९
९- जीवन कैसे जिया जाय ? (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) [साधन-सूत्र—श्रीहरिमोहनजी] ..	१६	२१- गोवध बंद हो [कविता] (डॉ० श्रीगणेशदत्तजी सारस्वत)	४१
१०- साधकोंके प्रति—	१७	२२- साधनोपयोगी पत्र	४२
(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१७	२३- व्रतोत्सव-पर्व [श्रावणमासके व्रत-पर्व]	४४
११- प्रभुकी पूर्वनियोजित लीला—'रामवनवास' (डा० श्रीरमेश मंगल वाजपेयीजी)	२०	२४- कृपानुभूति	४५
१२- गोस्वामीजीका काशीप्रवास (डॉ० श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)	२२	२५- पढ़ो, समझो और करो	४६
		२६- मनन करने योग्य	४९
		२७- कल्याणका आगामी ९२वें वर्ष (सन् २०१८ ई०)-का विशेषाङ्क 'श्रीशिवमहापुराणाङ्क' (उत्तरार्ध)	५०

चित्र-सूची

१- भगवान् जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा . (रंगीन) आवरण-पृष्ठ	५- द्रौपदी और श्रीकृष्ण	(इकरंगा)	८
२- श्रीकृष्णको झूला झुलाती श्रीराधाजी.. (")	६- नरसी मेहता	(")	१२
३- भगवान् जगन्नाथ, बलभद्र और सुभद्रा . (इकरंगा)	७- तुलसीदासजीके पहरेदार	(")	२२
४- असहाय द्रौपदीकी भगवान्से प्रार्थना	८- श्रीवैद्यनाथ-मन्दिर	(")	२७
(")	९- योगिराज गम्भीरनाथजी	(")	३२

एकवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹२२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनंद भूमा जय जय॥

जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥

जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

विदेशमें Air Mail }
सजिल्द शुल्क }

वार्षिक US\$ 50 (₹3000)

पंचवर्षीय US\$ 250 (₹15000)

{ Us Cheque Collection
Charges 6\$ Extra

पंचवर्षीय शुल्क

सजिल्द ₹११००

संस्थापक—ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका

आदिसम्पादक—नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार

सम्पादक—राधेश्याम खेमका, सहसम्पादक—डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़

केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : gitapress.org

e-mail : kalyan@gitapress.org

09235400242/244

सदस्यता-शुल्क—व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।

Online सदस्यता-शुल्क—भुगतानहेतु—gitapress.org पर Online Magazine Subscription option को click करें।

अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

याद रखो—सच्चा सुख या परम आनन्द चाहते हो तो सांसारिक अभाव या प्रतिकूलताका ही अभाव कर दो। भगवान् नित्य हैं, सत्य हैं, सर्वत्र, सर्वदा और सर्वथा हैं; उन्हींको देखो। उनका कहीं भी, कभी भी अभाव नहीं है। उनको सर्वत्र देखने लगोगे तब सांसारिक अभाव या प्रतिकूलताका अभाव अपने-आप ही हो जायगा; क्योंकि भगवान्‌के भावमें ही—इनके होनेका भ्रम हो रहा है। ये जहाँ दीख रहे हैं, वहाँ वस्तुतः ये नहीं हैं, वहाँ भगवान् ही हैं। यदि तुम सर्वत्र व्याप्त सर्वरूपमें स्थित उन भगवान्‌को देख सकोगे तो तुम्हें उस नित्य सत्य आनन्दकी प्राप्ति सहज ही हो जायगी, जिसकी खोजमें तुम सदा-सर्वदा लगे रहते आये हो। **‘शिव’**

भगवदाश्रयसे लोक-परलोकका कल्याण

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

लौकिक-पारलौकिक समस्त दुःखोंके नाश एवं समस्त लौकिक-पारमार्थिक सम्पत्तिकी सम्प्राप्तिका सर्वोत्तम साधन है भगवान्का अनन्य आश्रय लेकर सच्चे मनसे उनका भजन करना और लौकिक-पारलौकिक समस्त सुखोंके नाश एवं समस्त लौकिक-पारमार्थिक सम्पत्तिके सर्वनाशका साधन है—भोगोंका अनन्य आश्रय लेकर मनसे भगवान्को भुला देना। आज हम भगवान्को भूल गये हैं और हमारा जीवन केवल भोगोंका आश्रयी बन गया है। इसीसे इतने दुःख, संताप और विनाशके पहाड़ हमपर लगातार टूट रहे हैं। जो लोग क्रियाशील और विविध कर्मसमर्थ हैं, उनको भगवान्की प्रसन्नताके लिये भगवान्का सतत स्मरण करते हुए समयानुकूल स्वधर्मोचित कर्मोंके द्वारा भगवान्की पूजा करनी चाहिये तथा जो असमर्थ हैं, उन्हें आर्त तथा दीनभावसे भगवत्प्रीतिके द्वारा धर्मके अभ्युदय एवं विश्वशान्तिके लिये अनन्यभावसे भगवान्को पुकारना चाहिये।

हमारी अनन्य पुकार कभी व्यर्थ नहीं जायगी। हममें होना चाहिये द्रौपदीका—सा विश्वास, होनी चाहिये गजराजकी—सी निष्ठा और सबसे बढ़कर हममें होनी चाहिये प्रह्लादकी—सी आस्तिकता और निष्काम भाव, जिसके वचनको सत्य करनेके लिये भगवान् नृसिंहरूपसे खम्भेमेंसे प्रकट हुए—‘सत्यं विधातुं निजभृत्यभाषितम्।’ (श्रीमद्भा० ७।८।१८)

विपत्ति, कष्ट, असहाय स्थिति, अमंगल और अन्याय तभीतक हमारे सामने हैं, जबतक हम भगवान्को विश्वासपूर्वक नहीं पुकारते। एक महाशयने एक घटना सुनायी थी। एक घरमें गुण्डोंने पतिको पकड़ लिया और दो गुण्डे उसकी स्त्रीको वस्त्रहीन करके उसपर बलात्कार करनेको उद्यत हो गये। दोनों पति-पत्नी निरुपाय थे—असहाय थे। पत्नीने आर्त होकर—रोकर भगवान्को पुकारा। उसे द्रौपदीकी याद आ गयी। बस, तत्काल ही वे दोनों गुण्डे आपसमें लड़ गये। एकने दूसरेको छुरा मार दिया। उसके गिरते ही पति-पत्नीको छोड़कर शेष

गुण्डे भाग गये और इस बीचमें पत्नीको कन्धेपर उठाकर पतिको बचकर भाग निकलनेका अवसर मिल गया।

भारतकी सती देवियाँ आज द्रौपदीकी भाँति भगवान्को पुकारें तो भगवान् अवश्य रक्षा करेंगे। वे तुरंत किसी भी रूपमें प्रकट होकर सती देवियोंके सारे दुःख हर लेंगे और उसी क्षणसे उनको दुःख पहुँचानेवालोंके विनाशकी भी गारन्टी मिल जायगी।

दुष्ट दुःशासनके हाथोंमें पड़ी हुई असहाय द्रौपदीने



आर्त होकर मन-ही-मन भगवान् श्रीकृष्णका स्मरण करके कहा था—

गोविन्द द्वारकावासिन् कृष्ण गोपीजनप्रिय॥
कौरवैः परिभूतां मां किं न जानासि केशव।
हे नाथ हे रमानाथ ब्रजनाथार्तिनाशन॥
कौरवार्णवमग्नां मामुद्धरस्व जनार्दन।
कृष्ण कृष्ण महायोगिन् विश्वात्मन् विश्वभावन।
प्रपन्नां पाहि गोविन्द कुरुमध्येऽवसीदतीम्॥

(महा० सभा० ६८।४१—४३)

‘हे गोविन्द! द्वारकावासी सच्चिदानन्द प्रेमघन! गोपीजनवल्लभ! सर्वशक्तिमान् प्रभो! कौरव मुझे अपमानित

‘मैं पाण्डवोंकी पत्नी, धृष्टद्युम्नकी बहन और तुम्हारी सखी होकर भी कौरवोंकी सभामें घसीटी जाऊँ! यह कितने दुःखकी बात है ? भीमसेन और अर्जुन बड़े बलवान् होनेपर भी मेरी रक्षा नहीं कर सके। धिक्कार है इनके बल-पौरुषको ! इनके जीते-जी दुर्योधन क्षणभरके लिये भी कैसे जीवित है ? श्रीकृष्ण ! दुष्ट दुःशासनने भरी सभामें मुझ सतीकी चोटी पकड़कर घसीटा और ये पाण्डव टुकुर-टुकुर देखते रहे ।’ इतना कहकर द्रौपदी रोने लगी । उसकी साँस लम्बी-लम्बी चलने लगी और उसने गद्गद होकर आवेशसे कहा—‘ श्रीकृष्ण ! ये पति-पुत्र, पिता-भ्राता मेरे

सत्यका स्वरूप

[श्रीभरत-प्रसंग]

(मानस-मर्मज्ञ पं० श्रीरामकिंकरजी महाराज)

प्रायः सत्यको बहुत छिछले अर्थोंमें लिया जाता है। हम अधिकतर वाणीके सत्यको ही सत्य मानते हैं। हम जो नेत्रोंसे देखते हैं, उसे वाणीद्वारा व्यक्त कर देना ही सत्य मानते हैं, हृदयमें सत्य हुए बिना वाणीका सत्य केवल अधूरा ही सत्य है।

कैकेयीजीके दो वरोंको पूरा करनेके लिये महाराज दशरथने बाध्य होकर श्रीरामको चौदह वर्षका वनवास एवं भरतजीको राज्य देनेके जो वचन कहे—वह सत्य केवल उनकी वाणीका ही सत्य था, उनके हृदयमें बसा हुआ सत्य नहीं था। मानसमें वर्णन आता है—जब महाराज दशरथके निधनका समाचार पाकर भरतजी ननिहालसे लौटे, तो गुरु वसिष्ठको पता चला कि कैकेयीने अयोध्याका जो राज्य अपने पुत्र भरतके लिये माँगा और श्रीरामको वनवासी बना दिया, श्रीभरत उस राज्यको लेना नहीं चाहते। तब गुरु वसिष्ठ भरतके समक्ष एक समझौतेका प्रस्ताव रखते हैं, कहते हैं—भरत! देखो, तुम्हारे पिताजीने राज्य तुम्हें दिया है। अतः तुम्हें पिताकी आज्ञाका पालन करना चाहिये और जब राम आ जायँ तो राज्य उन्हें सौंप देना, पर अभी तो ले लो। कितना बढ़िया समझौता सुझाया गुरु वसिष्ठने! संसार भी बच जाय और भगवान् भी मिल जायँ! पर श्रीभरत कितने जागरूक हैं। उनकी दृष्टिमें यह समझौता न्याय और अन्यायमें है—वह समन्वय नहीं है। समन्वय अच्छा है और समझौता बुरा। जीवनमें समन्वय होना चाहिये, समझौता नहीं। समन्वय ज्ञान-भक्ति-कर्मका होता है, पाप-पुण्यका नहीं। पर हम लोग हैं, जो जीवनमें पाप और पुण्यका समन्वय करते रहते हैं। लोगोंने भी श्रीभरतसे ऐसे ही समन्वयका आग्रह किया—जो गुरु वसिष्ठने कहा था, उसे दुहराया। पर भरत जानते हैं कि वे लोग समन्वयका नहीं, समझौतेका आग्रह कर रहे हैं। वे जानते हैं कि पिताजीने उन्हें राज्य किस परिस्थितिमें दिया है। यह तो वैसे ही है जैसे कोई किसीके सीनेपर पिस्तौल

तानकर खड़ा हो जाय और कहे कि जो हम कहें, वैसे कहते जाओ! अब यह जो व्यक्ति बेचारा कह रहा है, वह स्वयं कह रहा है या पिस्तौल कहलवा रही है? उसका बस चले तो वह सब कुछ न कहे, जो उससे कहलवाया जा रहा है, वह तो बस अपनी बात कहे। इसी प्रकार भरतजी जानते हैं कि पिताजीने वह सब नहीं कहा, जिसका उल्लेख गुरु वसिष्ठ करते हैं, अपितु कैकेयी अम्बाने अन्यायपूर्ण ढंगसे पिताको यह कहनेको बाध्य किया कि राज्य भरतको देता हूँ। हमारे पिताजी हृदयसे चाहते थे कि श्रीरामका राज्य हो। अतः पिताजीकी इच्छाकी पूर्ति मेरे राज्य-ग्रहणसे नहीं होगी, बल्कि श्रीरामको राज्य देनेसे होगी।

भरतका मन्तव्य यह था कि यह जो पिताजीके सत्यकी बात कही जा रही है, वह सत्य वह नहीं था, जो उनकी वाणीसे प्रकट हुआ था, बल्कि वह तो उनके हृदयमें था।

वे तो भगवान् रामको ही अयोध्याके राज्यका उत्तराधिकारी समझते हैं और अपने पिताके निर्णयकी निन्दा करते हैं। यदि भगवान् राम चाहते तो अन्यायके विरुद्ध संघर्ष कर सकते थे। आजकल प्रत्येक व्यक्ति अन्यायके खिलाफ लड़नेको तैयार है। घरमें, परिवारमें, नगरमें, जिसे देखो वही कहता है—हम अन्याय नहीं सहेंगे। आश्चर्य तो यह है कि इतने लोग अन्यायके विरुद्ध लड़ रहे हैं, फिर भी अन्याय बढ़ता ही जा रहा है। अन्याय मानो रक्तबीज हो गया है, जो काटनेपर और भी बढ़ता जाता है। वैसे तो भगवान् राम भी कह सकते थे कि कैकेयीजी मोहमें आसक्त होकर मेरे प्रति अन्याय कर रही हैं और मैं इस अन्यायको नहीं सहूँगा। पर भगवान् राम ऐसा नहीं करते, वे तुरंत वनको चले जाते हैं। उनको इसमें कोई अन्याय नहीं दीखता। हमारी दृष्टिमें न्याय वह है, जिससे हमारा स्वार्थ पूरा होता है। हम जो चाहते हैं, उसे न्याय मानते हैं और सामनेवाला जो करता है, उसे अन्याय।

सत्संगका प्रभाव

भगवान् रामका दृष्टिकोण है। वे न्याय उसे मानते हैं, जिससे भरतको राज्य मिले और अपना स्वार्थ-त्याग हो और भरत भी न्याय उसे मानते हैं, जिससे श्रीरामको राज्य मिले।

श्रीराम और श्रीभरत दोनोंकी परिभाषा वह है, जिससे स्वयंके हिस्सेमें भोगके बदले त्याग पड़े, जिसमें संघर्षके

स्थानपर एक-दूसरेको देनेकी वृत्ति हो। यह रामराज्य है। जहाँ उचित लेन-देनकी वृत्ति है, वह धर्मराज्य है और जहाँ परस्पर देनेकी वृत्ति है, वह रामराज्य। श्रीराम और श्रीभरत अपने चरित्रके माध्यमसे यही दर्शन प्रस्तुत करते हैं।

[प्रेषक — श्रीअमृतलालजी गुप्ता]

सत्संगका प्रभाव

(श्रीभागवतप्रसादजी पाण्डेय)

सत्का श्रवण, कीर्तन, भजन, मनन, उसपर विश्वास, श्रद्धा या उसके अनुसार चलना सत्संग कहलाता है। सत्—शाश्वत, नित्य, प्रदीप्त, उत्प्रेरक, शिवम् एवं सुन्दरम् होता है।

सत्यम् शिवम् सुन्दरम्—आह! कितना आनन्ददायक वाक्य है? इस वाक्य के श्रवणमात्रसे हर्षातिरेकसे मन भर उठता है और यदि सत्के साथ या पास रहा जाय तो कहना ही क्या! सत्यकी अनुभूति या इसका दर्शन जीवनका परम लक्ष्य होना चाहिये।

सत्संगका प्रभाव मानव ही नहीं पशुपर भी पड़ता है। प्रस्तुत कथासे यह बात उजागर होती है—

किसी राजाके पास गजमौलि नामका एक हाथी था। बहुत ही भोला-भाला, अपनी सूँड़से बच्चोंको पीठपर बैठा लेता था। जानवर होते हुए भी वह बड़ा बुद्धिमान् था, कभी किसीको उसने हानि नहीं पहुँचायी। अचानक उस हाथीके व्यवहारमें बदलाव आ जाता है। कई जानवरोंको उसने पटक-पटककर मार दिया एवं एक राजकर्मचारीको घायल कर दिया।

हाथीके स्वभावमें परिवर्तनका कारण जाननेहेतु राजाने पण्डितोंकी एक बैठक बुलायी। राजाने पण्डितोंसे पूछा कि सीधा-सादा हाथी अचानक खूँखार क्यों हो गया? विचारणीय बिन्दुपर पण्डितोंने कहा कि महाराज! संगतसे गुण आता है। अतः हाथीके स्वभावमें परिवर्तनका कारण जाननेहेतु गजशालामें रात-भर गुप्त पहरा दिया जाय। राजाने अपने सिपाहियोंको गुप्त पहरा देनेका आदेश दिया। सिपाहियोंने आकर राजाको सूचना दी कि महाराज! आधी रातको गजशालामें चोरोंकी बैठक होती है। यहीं बैठकर वे चोरीकी योजना बनाते हैं। उनकी वार्तालाप हिंसक

होती है। राजाने यह बात पण्डितों को बतायी। पण्डितोंने कहा—महाराज! गजशालाके सामने रामायण, गीताका प्रवचन कम-से-कम एक माहतक करवाया जाय। इसके अच्छे परिणाम होंगे। राजाने वैसा ही करवाया। एक माह बीतते-बीतते हाथीके स्वभावमें भारी परिवर्तन हो गया। प्रवचनके प्रभावसे खूँखार एवं हिंसक हाथी पुनः सीधा-सादा बन गया।

यहाँ यह बात उजागर होती है कि सत्के श्रवणमात्रसे उस पशुका मन, विचार पवित्र हो गया। फलतः वह हिंसकसे अहिंसक बन गया। विचार ही कर्मकी आधारशिला है। सत्संगतिसे ही सत् विचार आता है एवं सत्कर्मसे सद्भाव आता है।

प्रश्न उठता है सत् क्या है? कहाँ खोजें? उसका संग कैसे करें? जो शाश्वत, अमिट, नित्य है, वह सत् है। कहाँ खोजें? प्रश्न गम्भीर है। पूजा, जप, तप, दान, भजन, कीर्तन, सत् श्रवण सत्प्राप्ति मार्गको सुगम बनाता है। सत् दर्शनके लिये अपने भीतरकी यात्रा करनी होगी। मनको प्रभुके अंश आत्मासे जोड़ना होगा। यद्यपि सत् रूपी आत्माके हम बहुत ही निकट हैं, फिर भी इसकी खोज मृगके कस्तूरीकी भाँति बाहरी दुनियामें करते हैं। बाहरी जगत् माया है। सत् हमारे शरीरके अन्दर आत्माके रूपमें है, जिसे जान लेना ही सत्-दर्शन है—ईश्वरदर्शन है। आत्मबोधके बाद कुछ भी जानना बाकी न रहेगा। फिर मानव-जीवनके मूल उद्देश्यकी पूर्ति हो जायगी। जन्म-मरणके बन्धनसे निजात मिल जायगी। सत्-बोधहेतु ही मानव-जीवन सिर्फ एक बार मिलता है। सत्संग किये बिना यदि जीवन व्यर्थ गवाँ दिया जाय तो चौरासी लाख योनियोंमें भटकना होगा।

दुःखनाशके अमोघ उपाय

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भार्जजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

सभी प्राणी सुख चाहते हैं और वह भी अखण्ड, पूर्ण और नित्य सुख चाहते हैं, परंतु मोहवश उसकी खोज करते हैं संसारके पदार्थोंमें, जो स्वयं अपूर्ण, खण्ड और अनित्य हैं। भगवान्ने उनको सुखरहित और अनित्य अथवा दुःखालय और अशाश्वत बतलाया है। सो सत्य ही है। जो वस्तु अपूर्ण, खण्ड और अनित्य होती है, वह कभी सुख नहीं दे सकती। फिर जगत्में जो हम सुख देखते हैं, वह क्या है? वह है भ्रान्ति। असलमें तो 'विषयोंमें सुख है,' ऐसी कल्पना ही भ्रम है। भगवान्ने भोगोंको दुःखयोनि बतलाया है। भगवान् कहते हैं—

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।

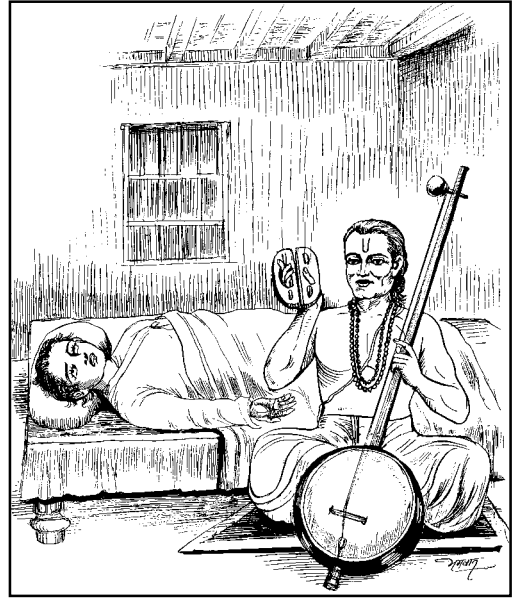
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः॥

(गीता ५।२२)

'अर्जुन! ये जो इन्द्रियोंके स्पर्शसे उत्पन्न भोग हैं, सब दुःखकी उत्पत्तिके स्थान हैं और आदि-अन्तवाले हैं। बुद्धिमान् पुरुष उन भोगोंमें कभी प्रीति नहीं करता।'

वस्तुतः जगत्के सुख-दुःख सब केवल अनुकूलता और प्रतिकूलताको लेकर ही हैं। जहाँ अनुकूलताका बोध है, वहाँ सुख है और जहाँ प्रतिकूलताका बोध है, वहीं दुःख है। किसी स्थिति, घटना या वस्तुमें सुख-दुःख नहीं है। एक आदमीकी मृत्यु होती है। उसमें जिनका ममत्व है, वे प्रतिकूलताका अनुभव करके रोते हैं और जिनकी शत्रुता है, वे अनुकूलताके बोधसे हँसते हैं और आनन्द मनाते हैं। नारदजीके पूर्वजन्ममें जब वे दासीपुत्र थे और बहुत छोटी उम्रके—केवल पाँच वर्षके थे, तब उनकी आश्रयभूता एकमात्र माताको साँपने डस लिया। माता मर गयी, इसपर नारदजीको दुःख नहीं हुआ। उन्होंने सोचा कि 'माता मेरे भजनमें एक प्रतिबन्धक थी। भगवान्ने बड़ा अनुग्रह किया, जो माताका देहान्त हो गया।' वे माताके इकलौते पुत्र थे, परंतु अनुकूलताकी भावनासे दुखी

नहीं हुए। नरसी भक्तके इकलौते और अत्यन्त प्यारे जवान पुत्रकी मृत्यु हो गयी। नरसीजीने उसमें अनुकूलताका



अनुभव किया और दुखी न होकर वे गाने लगे—
'भल्लुं थयुं रे भाँगी जँजाळ। सुखेथी भजशुं श्रीगोपाळ।' 'अच्छा हुआ जंजाल टूट गया, अब सुखसे श्रीगोपालजीका भजन करूँगा।' आजादीसे पहलेकी बात है। कलकत्तेके 'अलीपुर बम केस' में जिसमें श्रीअरविन्द तथा उनके भाई श्रीवारीन्द्रकुमार घोष आदि अभियुक्त थे। नरेन्द्र गोस्वामी नामक एक युवक सरकारी गवाह बन गया था। उसको जेलमें ही एक दूसरे अभियुक्त श्रीकन्हाईलाल दत्तने मार डाला। कन्हाईलालको फाँसीकी सजा हुई। पर उसको अपने इस कार्यपर इतना अधिक सन्तोष और आनन्द था कि फाँसीकी सजा सुनायी जाने और फाँसी होनेके बीचके दो-तीन सप्ताहके समयमें ही उसका लगभग अठारह पाँड वजन बढ़ गया। कहाँ तो मौतके नामसे खून सूख जाता है, कहाँ मृत्युकी तिथि निश्चित हो जानेपर भी खून बढ़ गया। गोस्वामीको मारना पाप था या पुण्य, यह पृथक् प्रश्न है। पर कन्हाईलालने अपनी इस मृत्युमें इतनी अधिक विलक्षण अनुकूलताका

‘इसका स्वरूप जैसा दीखता है, वैसा मिलता नहीं और इसका न आदि है, न अन्त है और न इसकी अच्छी तरहसे स्थिति ही है।’ सिनेमा देख रहे हैं। नाना प्रकारके दृश्य दिखायी दे रहे हैं। आवाज सुनायी पड़ रही है, परंतु कोई चाहे कि इन देखी हुई वस्तुओंको पर्देके पास जाकर मैं ले लूँ तो उसे सर्वथा निराश होना पड़ता है। वहाँ सिवा सादे पर्देके और कुछ है ही नहीं। अथवा जैसे स्वप्नकी सृष्टिके पदार्थ और वहाँकी घटनाएँ जागनेपर नहीं मिलतीं, पर जबतक स्वप्न है, तबतक यह पता नहीं लगता कि यह स्वप्नकी सृष्टि कबसे बनी है और यह कबतक रहेगी। वहाँ तो यह नित्य ही मालूम होती है। पर सचमुच उसकी वहाँ कुछ भी प्रतिष्ठा—स्थिति नहीं है। स्वप्न टूटा कि कुछ नहीं। अतएव जगत्के समस्त

सुख-दुःख स्वप्नकी सृष्टिके सुख-दुःखोंकी भाँति असत् हैं, जागनेपर जैसे स्वप्नके देखे हुए पदार्थोंकी सत्ता नहीं रहती, वैसे ही इनकी भी सत्ता नहीं है, इसलिये इन घटनाओंको लेकर सुखी-दुखी होना मूर्खता है। एक ही अखण्ड परिपूर्ण परमात्मसत्ता है, वह नित्य सत्य सच्चिदानन्दघन है। उसमें न जन्म है न मृत्यु, न सुख है न दुःख, न लाभ है न हानि। वह सदा सम, एकरस और कूटस्थ है। इस प्रकारके विचारसे दुःखका नाश हो जाता है। संसारकी स्थिति कुछ भी हो इस प्रकारके निश्चयवाले पुरुषको सुख-दुःख कभी नहीं होता। श्रीगीतामें कहा है—

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः।

यस्मिन् स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते॥

(६।२२)

‘जिस लाभको प्राप्त करके उससे अधिक कोई दूसरा लाभ नहीं मानता और जिसमें स्थित होकर वह बड़े भारी दुःखसे भी विचलित नहीं होता।’

वह निरतिशय आत्यन्तिक आनन्दका अनुभव करता है। आनन्दरूप ही हो जाता है। फिर उसके लिये दुःख रहता ही नहीं।

ऐसी स्थिति न हो, तबतक विचारपूर्वक ऐसी धारणा करे। इस धारणासे ही दुःखका नाश हो जाता है।

२. जगत्में जीवोंके लिये फलरूपसे जो कुछ भी प्राप्त होता है, सब सर्वशक्तिमान् परमसुहृद् भगवान्के नियन्त्रणमें और उनके विधानसे होता है। मंगलमय प्रभुका प्रत्येक विधान मंगलमय है। देखनेमें चाहे कितना ही भयंकर हो, पर वास्तवमें वह कल्याणमय ही है। निपुण डॉक्टर जहरीले फोड़ेका ऑपरेशन करते हैं। छुरियोंसे अंगको काटते हैं। दर्द भी होता है। पर डॉक्टर यह क्रूर कार्य करते हैं रोगीके मंगलके लिये तथा रोगी यदि विश्वासी और समझदार है तो वह इस निष्ठुर पीड़ादायक कर्ममें भी डॉक्टरकी दया मानकर प्रसन्न होता है और उसका कृतज्ञ होता है। इसी प्रकार हमारे परमसुहृद् मंगलमय भगवान् भी कभी-कभी हमारे मंगलके लिये ऑपरेशन किया करते हैं। इस लक्ष्मणों के विचारों को धारण करके दुःख को दूर करने में मदद मिलेगी।

ही नहीं। छोटे बच्चेको माता रगड़-रगड़कर नहलाती है, बच्चा रोता है, पर माता उसके शरीरका मैल उतारकर उसे स्वच्छ, पवित्र, निर्मल बनाकर नये कपड़े पहनाने और सजानेके लिये ही यह आयोजन करती है। इसी प्रकार भगवान् भी हमें निर्मल और पवित्र बनानेके लिये पापोंका फल—कष्ट भुगताया करते हैं। इसमें भी उनका वात्सल्य और कारुण्य भरा रहता है। इस दृष्टिसे यदि हम विश्वासपूर्वक विचार करें तो फिर दुःख नामक कोई वस्तु नहीं रह जाती और हम हर-हालतमें भगवान्के मंगलविधानका दर्शन करके भगवान्के मंगलमय करकमलका स्पर्श पाकर आनन्दमुग्ध रह सकते हैं।

३. जगत्में वास्तवमें दो ही तत्त्व हैं—भगवान् और भगवान्की लीला। ‘जो कुछ है, सब भगवान् हैं,’ और ‘जो कुछ हो रहा है, सब भगवान्की लीला हो रही है।’ एवं लीलामय और लीलामें वैसे ही अभेद है, जैसे अग्नि और उसकी दाहिका शक्तिमें अथवा सूर्य और सूर्यके प्रकाशमें। अतः हमारे साथ जो कुछ हो रहा है, सब हमारे प्रियतम भगवान्की लीला ही हो रही है। इस लीलाका संस्पर्श वस्तुतः लीलामय भगवान्का ही संस्पर्श है। विश्वासपूर्वक इस प्रकारका भाव हो जानेपर दुःखका सर्वथा अभाव हो जाता है। क्षण-क्षणमें प्रत्येक सुख-दुःखसंज्ञक भोगोंमें लीलाविहारी भगवान्का मंगलमय स्पर्श प्राप्त होता रहता है, जिससे नित्य नव-नव आनन्दरसकी धारा बहती रहती है।

ये तीनों ही बातें सिद्धान्ततः सत्य हैं। जगत् स्वप्नवत् है—केवल ब्रह्म ही व्याप्त है। जगत्में सब कुछ मंगलमय भगवान्के मंगल विधानसे मंगल ही हो रहा है और जगत्में भगवान् ही अपने-आपसे आप ही खेल रहे हैं। तीनोंका ही तात्त्विक स्वरूप एक ही है। यह वस्तुतः सत्यको सत्यमें देखना है, जो मानव-जीवनका परम कर्तव्य है। इसीका फल भगवत्प्राप्ति या पूर्ण सुखरूप मोक्ष है।

इस प्रकार अशेष दुःखोंसे छूटकर मनुष्य भगवत्कृपासे अपनी इसी आयुमें अखण्ड और पूर्ण सुखकी प्राप्ति कर

आध्यात्मिक जीवनकी सफलताका उपाय

(ब्रह्मलीन परमहंस स्वामी श्रीदयानन्द 'गिरि' जी महाराज)

मनुष्य जन्मसे ही अपने जीवनको परिवारमें या किसी एक समाजमें पाता है। उसीके नियम या मर्यादाएँ उसे जन्मभर बाँधे रखती हैं। वह उनके अतिरिक्त अपनी बुद्धिसे तो परलोकके बारेमें बहुत ही कम समझ रखता है, परंतु उसे चाहिये कि वह धार्मिक सत्संगद्वारा या धर्मग्रन्थोंको पढ़कर तथा उनमें श्रद्धा रखकर परलोकके सम्बन्धमें भी कुछ जाने तथा मृत्युके पश्चात् भी उत्तम गति पानेके लिये विचार करे और कठिनाता पड़नेपर तदनुसार आचरण करनेरूपी तप भी करे तथा अपने सांसारिक मिथ्या सुखोंको भी परलोकके भयसे विचारद्वारा ही ग्रहण करनेका धर्म रखे। अस्तु, यहाँ केवल इतना ही सूचित करना है कि मनुष्य चाहे अपनी बाह्य या सांसारिक बुद्धिद्वारा परलोक या मृत्युके पश्चात्की बातों या सत्यको भले ही न समझ सके, परंतु सत्य यह है कि ध्यानकी सूक्ष्मता (बारीकी) —तक पहुँचे हुए ऋषियोंके ज्ञानके अनुसार किसी भी जीवका अत्यन्त नाश कभी भी नहीं होता। वैसे तो संसारकी किसी भी वस्तुके अत्यन्त नाश—‘कभी भी न रहने’के रूपमें अत्यन्त अभावको आजकलका कोई वैज्ञानिक भी माननेको तैयार नहीं। वस्तुतः जिसको हम किसीका नाश होना कहते हैं—वह केवल उस नाशवाली वस्तुकी अवस्थाका परिवर्तन (बदलना)—मात्र ही है, अत्यन्त (बिलकुल) नाश नहीं है। उदाहरणके लिये घट (घड़ा) फूटा; ठिकरियाँ बनीं। ठिकरियाँ चूर-चूर हुई, परमाणु या अत्यन्त छोटे कण बने, यदि ये कण या परमाणु भी फूटें तो एक व्यापक शक्ति, जिससे कि ये सब बने हुए थे, प्रकट होती है। उसे चाहे शास्त्रोंके ऋषि मायाका नाम दें या प्रकृतिकी सूक्ष्म अवस्थाका, परंतु वस्तु उस अपने स्थूल घटरूपसे बदलते-बदलते यहाँतक पहुँची है। पुनः घटरूपमें पहुँचनेकी योग्यता भी उसमें होती है। आधुनिक वैज्ञानिक इस सत्यको कोई दूसरा नाम भले ही दे दें, परंतु यह सत्य या अन्तिम तत्त्व अपनेमें सब कुछ है और सबको सँभाले बैठा है। शास्त्रोंमें ऋषियोंने इसी सत्यको

परमेश्वरकी माया या प्रकृति कहा है।

अब यहाँ धर्मके प्रेमीको तो केवल इतना ही समझना है कि जब किसी वस्तुतकका अत्यन्त नाश या विनाश नहीं होता तो आत्माका भी विनाश मृत्यु हो जानेपर कैसे हो पायेगा? इस आत्माके बारेमें सत्यको खोजनेवालोंने और भी युक्ति दर्शायी है कि जैसे सोया हुआ प्राणी अपने शरीर या इस संसारके बारेमें कुछ भी न समझनेपर भी निद्रामें पहुँचनेपर वहाँ एक दूसरा शरीर धारण कर लेता है। वह शरीर इस सोये शरीरसे बिलकुल भिन्न है। इस संसार, परिवार या समाजके सब जीवोंकी दृष्टिमें वह सोये हुए मुर्देके समान दीख रहा है। उस अवस्थामें वह यहाँके प्राणियोंके वृत्तान्त या भावोंको बिलकुल ही नहीं समझता, परंतु निद्राके आगोशमें पड़ा हुआ इसी शरीरमें बसनेवाला आत्मा या जीव किसी दूसरी स्वप्नकी धरती या दूसरे आकाशमें विचरता हुआ, वहाँके दूसरे शरीरमें सब प्रकारकी बातोंको समझता हुआ, वहाँ कई-एक कर्मोंमें संलग्न रहता है। यह सब आत्मारामकी कथा है। इस संसारमें होते हुए भी वह केवल निद्रामात्रको अपनाकर यहाँ तो मृतककी भाँति निश्चेष्ट पड़ा है और स्वप्नके संसारमें अपने-आपको कई-एक प्रकारके दुःख-सुखकी उलझनोंमें पड़ा हुआ देखता है। यहाँ इतना ही समझना है कि निद्रा यदि इस आत्माको अपने वशमें करके ज्ञानशून्य नहीं कर सकी तो पुनः मृत्यु भी, जो कि एक निद्राके ही समान है, कैसे इसे अपने वशमें करके इस आत्माके ज्ञानके दीपकको बुझाकर इसका नाश कर सकेगी? इसी आत्माके बारेमें इस बातको भी ध्यानमें रखना पड़ेगा कि इसीके साथ एक ऐसी रचनेवाली शक्ति भी रहती है जो कि जीवके अन्तरमें पड़े कर्मों या संस्कारोंके अनुसार धरती, आकाश तथा प्राणियोंको रचकर जीवको कई-एक अवस्थाओंका अनुभव करवाती है। यह हमने स्वप्नके संसारमें देखा है। स्वप्न इसी सत्यका प्रमाण है। इस शक्तिका नाम भले कुछ भी रखा जाय; परमात्मा,

ईश्वर, नियति या अन्य भी कोई; परंतु जो यह सत्य है, उसका निषेध नहीं बन पाता, परंतु इतना ध्यानमें रखना होगा कि ये सब सत्य उसी सत्पात्र, जिज्ञासु, उद्योगी धार्मिक जनको सूझेंगे, जो बाहरकी जीवनचर्याको सही रखकर ध्यानको उन्नत करे और बाहरसे सांसारिक उलझनसे अवकाश प्राप्त करके इस सत्यकी खोज करनेमें अपना जीवन लगाये। इस सबसे आध्यात्मिक जीवन उन्नत होता जायगा और वह जानेगा कि यह आत्मा जो अनेक जन्मोंसे नाना प्रकारसे ज्ञान पाता हुआ कई-एक अवस्थाओंसे गुजरता है, उन्हें लाँघता है, सबमें अपना-आपा देखता है, वह मृत्युसे अत्यन्त नष्ट या विनष्ट न होकर जैसी सामग्री अपने साथ ले जाता है, वैसे ही संसारको वह आगे पुनः भी रच लेता है और वहाँ सुख-दुःखका अनुभव करता है। हाँ! यदि इस

आत्मामें यही सत्य-ज्ञान बढ़ते-बढ़ते, उन्नत या विकास-भावको प्राप्त होते-होते निर्विरोध बाहर जीवन धारण करनेतकका सामर्थ्य प्राप्त कर ले तथा संसारके सब प्रभावोंसे मुक्त रहे तो यही आत्मा अपने शुद्ध, पवित्र, परम सूक्ष्म, नित्य आनन्दरूपमें सदाके लिये ठिकाना भी पाता है। यही बस यही! आध्यात्मिक जीवनकी पूर्णता तथा सफलता है। इस फलकी प्राप्तिसे परे कुछ शेष पानेकी इच्छा भी नहीं रहती।

सब अनर्थोंसे बचनेके लिये अर्थात् परलोकमें सद्गति पानेके निमित्त जीवनकालमें भी अपने-आपमें सब बन्धनोंसे मुक्त होकर केवल आत्मामें ही सुख, शान्ति और तृप्ति पानेके हेतु केवल एक सधा हुआ आध्यात्मिक जीवन ही एक सहारा है।

[प्रेषक—प्रो० श्रीज्ञानचन्द्रजी गर्ग]

जीवन कैसे जिया जाय ?

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

यूनानके प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात एक बार भ्रमण करते हुए एक शहरमें पहुँचे। वहाँ उनकी एक वृद्ध व्यक्तिसे भेंट हुई। दोनों काफी घुल-मिल गये। सुकरातने उनके व्यक्तिगत जीवनमें काफी रुचि ली, काफी खुलकर बातें कीं।

सुकरातने सन्तोष व्यक्त करते हुए कहा 'आपका विगत जीवन तो बड़े शानदार ढंगसे बीता है, पर इस वृद्धावस्थामें आपको कौन-कौनसे पापड़ बेलने पड़ रहे हैं, यह तो बताइये ?'

वृद्ध किंचित् मुसकराया—'मैं अपना पारिवारिक उत्तरदायित्व अपने समर्थ पुत्रोंको देकर [और इन सबको सर्व सामर्थ्यवान् प्रभुको समर्पित करके] निश्चिन्त हूँ। वे जो कहते हैं कर देता हूँ, जो खिलाते हैं, खा लेता हूँ और अपने पौत्र-पौत्रियोंके साथ खेलता रहता हूँ। बच्चे कभी भूल करते हैं तब भी चुप रहता हूँ। मैं उनके किसी कार्यमें बाधक नहीं बनता। पर जब कभी वे परामर्श लेने आते हैं तो मैं अपनी जीवनके सारे अनुभवोंको उनके सामने रखकर की हुई भूलसे उत्पन्न दुष्परिणामोंकी ओरसे सचेत कर देता हूँ। वे मेरी सलाहपर कितना चलते हैं, यह देखना और अपना मस्तिष्क खराब करना मेरा काम नहीं है। वे मेरे निर्देशोंपर चलें ही, यह मेरा आग्रह नहीं। परामर्श देनेके बाद भी यदि वे भूल करते हैं तो चिन्तित नहीं होता। उसपर भी वे पुनः मेरे पास आते हैं तो मेरा दरवाजा सदैव उनके लिये खुला रहता है। मैं पुनः उचित सलाह देकर उन्हें विदा करता हूँ।

वृद्धकी बात सुनकर सुकरात बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा कि आपने इस आयुमें जीवन कैसे जिया जाय, यह बखूबी समझ लिया है।' [साधनसूत्र—प्रस्तुति : श्रीहरिमोहनजी]

साधकोंके प्रति—

[परमात्म-तत्त्वकी प्राप्ति कठिन नहीं]

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

प्रायः सामान्य साधकोंकी ऐसी धारणा रहती है कि परमात्मतत्त्वकी प्राप्ति कठिन कार्य है; पर वस्तुतः वह कठिन नहीं है, हमने अपनी भ्रान्त धारणाके कारण ही उसे कठिन और अगम मान रखा है। यहाँ यह शंका की जा सकती है कि स्वयं भगवान् श्रीकृष्णने भी इस कठिनताकी ओर संकेत किया है—

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।

यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥

(गीता ७।३)

‘हजारों मनुष्योंमें कोई एक मेरी प्राप्तिके लिये यत्न करता है और उन यत्न करनेवाले योगियोंमें भी कोई ही मेरे परायण होकर मुझको तत्त्वसे अर्थात् यथार्थरूपसे जानता है।’

पर विचारपूर्वक देखें तो इस श्लोकका तात्पर्य परमात्मतत्त्वकी प्राप्तिमें कठिनाई बतानेमें न होकर इस मार्गमें चलनेवालों (प्रवृत्त होनेवालों)–की दुर्लभता बतानेमें है। मनुष्य–देह मिलनेपर भी अधिकांश लोग इस मार्गपर पाँव नहीं रखते, अपने उद्धारका ऐसा स्वर्ण–अवसर मिलनेपर भी वे भोगोंमें आसक्त रहते हैं। यह नहीं सोचते कि हम जो कुछ कर रहे हैं, उसका परिणाम क्या होगा? वे अंधाधुंध एक–दूसरेका अनुकरण करते हुए दुर्गतिको प्राप्त होते हैं। उपर्युक्त श्लोकद्वारा भगवान्ने परमात्मतत्त्व–प्राप्तिके लिये सच्ची लगनसे प्रयास करनेवाले मनुष्योंकी कमी बतलायी है, न कि उस तत्त्वकी प्राप्तिमें कठिनता। हमें मनुष्य–देह प्रदान करनेका उद्देश्य ही यही है कि हम अच्छा संग प्राप्तकर सद्भिचारोंका संग्रह करें, जिनसे जन्म–जन्मान्तरके कुसंस्कार नष्ट होकर हमें सुगमतापूर्वक परमात्म–तत्त्वकी प्राप्ति हो जाय।

भगवान् तो परमात्म-तत्त्वकी प्राप्तिमें सुगमता
बतलाते हुए कहते हैं—

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।

तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

(गीता ८।१४)

‘हे अर्जुन! जो पुरुष मुझमें अनन्यचित्त होकर नित्य-निरन्तर मुझ पुरुषोत्तमका स्मरण करता है, उस नित्य-निरन्तर मुझमें युक्त हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ अर्थात् उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।’

ऐसी सुलभता होते हुए भी परमात्म-तत्त्वको जाननेवाले बहुत कम हैं, इसका कारण क्या है?

इसका मुख्य कारण है कि अधिकांश मनुष्य तात्कालिक (प्रत्यक्ष दीखनेवाले) सुख-भोग और पदार्थ-संग्रहमें लगे रहते हैं, वे प्रत्यक्ष दिखायी न देनेवाले एवं इन्द्रियातीत ईश्वरके सम्मुख नहीं होते। यदि साधककी प्रवृत्ति परमात्म-तत्त्वकी ओर होगी तो चाहे वह दुराचारीसे भी दुराचारी क्यों न हो, उसे निश्चय ही अपने लक्ष्यकी प्राप्ति शीघ्र हो जायगी। भगवान्‌के वचन हैं—

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।

साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः॥

(गीता ९।३०)

‘यदि कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्यभावसे मेरा भक्त होकर मुझको भजता है तो वह साधु ही मानने योग्य है; क्योंकि वह यथार्थ निश्चयवाला है।’

इसी प्रकार श्रीरामचरितमानसमें भी कहा गया है—

जौं नर होइ चराचर द्रोही । आवै सभय सरन तकि मोही ॥
तजि मद मोह कपट छल नाना । करउँ सद्य तेहि साथ समाना ॥

(५।४८।२-३)

तात्पर्य यह कि साधक दृढ़ निश्चय करके अपनी प्रवृत्तिको परमात्म-तत्त्वकी ओर मोड़ ले तो उसके लिये परमात्माकी प्राप्ति कठिन नहीं, अत्यन्त सुलभ है। परमात्म-तत्त्वकी ओर प्रवृत्ति होते ही—

संस्कृत-अनिच्छित वस्तुएँ भी मिलीं, परंतु टिकीं नहीं। ऐसा सर्वमान्य अनुभव होते हुए भी मनुष्य मनोऽनुकूल सांसारिक परिस्थितियों और पदार्थोंके पानेकी इच्छा नहीं छोड़ता। प्रथमतः तो ऐसे मनोऽनुकूल पदार्थ मिलते नहीं, मिलते भी हैं तो ठहरते नहीं। यदि ये सांसारिक सुख और पदार्थ टिकते भी हैं तो मनुष्य स्वयं नहीं रहता। इस अकाट्य सिद्धान्तको कोई बदल नहीं सकता, फिर भी मनुष्य अपने इस अनुभवकी उपेक्षा करनेके कारण सांसारिक अभिलाषाओंको त्यागता नहीं वरन् और अधिक तेजीसे उनकी ओर दौड़ता है।

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।

(गीता ९।३१)

‘वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सदा रहनेवाली परम शान्तिको प्राप्त होता है।’

इसी प्रकार ज्ञान-मार्गमें प्रवृत्त होनेवाला पापी-से-पापी साधक भी उसी परम शान्तिको प्राप्त करता है—

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः।

सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं संतरिष्यसि॥

(गीता ४।३६)

यहाँ यह शंका हो सकती है कि पापी तो इनका अधिकारी भी नहीं हो सकता, फिर उसे ज्ञानरूपा नौका मिलना तो अत्यन्त कठिन ही होगा? परंतु भगवान्का अभिप्राय यह है कि पापी-से-पापी जब परमात्म-तत्त्वकी प्राप्तिके लिये अत्यन्त व्याकुल होता है तो मेरी सहज कृपासे उसका निश्चय ही कल्याण हो जाता है।

अब इस बातपर विचार करें कि परमात्म-तत्त्व जब पापियों और धर्मात्माओं—सभीके लिये सुगम है, उसके सभी समानरूपसे अधिकारी हैं, तब फिर उसकी प्राप्तिमें कठिनताका आभास क्यों होता है? विचार किया जाय तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि यह कठिनता हमने ही मान रखी है। वास्तवमें कठिनता है नहीं, उसका आभासमात्र होता है। सांसारिक पदार्थोंकी प्राप्ति और उनमें सुख-बुद्धिका त्याग न कर पाना ही परमात्म-तत्त्व-प्राप्तिकी उत्कण्ठामें सबसे बड़ी बाधा है। इस विषयमें एक मार्मिक बात यह समझनी चाहिये कि परमात्म-तत्त्वकी प्राप्तिमें पूर्वजन्मार्जित पाप उतने बाधक नहीं होते, जितनी कि वर्तमान जन्मकी धर्म-विरुद्ध प्रवृत्तियाँ। मनुष्यका ऐसा स्वभाव बन गया है कि वह संसारकी नश्वर वस्तुओं एवं क्रियाओंसे सुख लेना चाहता है। इसी कारण उसकी परमात्म-तत्त्वकी ओर प्रवृत्ति ही नहीं होती, फिर उसमें अनन्यता तो होगी ही कैसे?

जो कुछ संसारमें प्राप्त हुआ है, उससे हमें सन्तोष होता नहीं और ये सांसारिक सामग्रियाँ अधिक-से-अधिक प्राप्त हो जायँ, ऐसी इच्छा बराबर बनी रहती है। इससे यह पता चलता है कि सांसारिक पदार्थोंसे सदाके लिये तृप्ति नहीं हो सकती, आज-तक किसीकी तृप्ति हुई भी नहीं। शास्त्रोंमें कहा गया है—

यत् पृथिव्यां ब्रीहियवं हिरण्यं पशवः स्त्रियः।

न दुह्यन्ति मनःप्रीतिं पुंसः कामहतस्य ते॥

(श्रीमद्भा० ९।१९।१३)

‘लोकमें जितने धन, धान्य, सुवर्ण, पशु और स्त्रियाँ हैं, वे सब मिलकर भी विषयग्रस्त पुरुषके चित्तको संतुष्ट नहीं कर सकते।’

जब सांसारिक पदार्थोंसे आजतक किसीको पूर्णता नहीं मिली। न मिल सकती है और न कभी मिल ही सकेगी, तब हमें उनसे पूर्णता कैसे प्राप्त हो सकती है?

यह जीव चेतन (परमात्मा)—का अंश है—

ईश्वर अंस जीव अबिनासी। चेतन अमल सहज सुखरासी॥

(रा०च०मा० ७।११७।२)

चेतनकी भूख जड़, नाशवान् संसार और उसके पदार्थों या सुख-संग्रहसे कैसे मिटेगी? यदि परमात्माका जड़ वस्तुओंकी इच्छा करना तो इसका अर्थ

(रा०च०मा० ७।११२ ख)

वास्तवमें इस निकटताको दूरीमें, सुगमताको कठिनतामें बदला है सांसारिक इच्छाओंने, भोगोंने, विभिन्न कामनाओंने। इनका त्याग पूरी सच्चाईसे होना चाहिये, फिर परमात्म-तत्त्वकी प्राप्तिमें कोई कठिनता नहीं रहती।

प्रभुकी पूर्वनियोजित लीला—‘रामवनवास’

(डा० श्रीरमेश मंगल वाजपेयीजी)

श्रीहरि विष्णुने मनु-शतरूपाको दिये गये वरदान (‘होइहु अवध भुआल तब मैं होब तुम्हार सुत’)-को सत्य करनेके लिये तथा असुरोंके दलनार्थ ही अपने मानवावतारका संकल्प लिया और त्रेतामें मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामके रूपमें प्रकट हुए। श्रीरामचरितमानसमें श्रीमद्भगवद्गीताके ईश्वरीय संकल्पको रेखांकित करते हुए कहा गया है—

जब जब होइ धरम कै हानी। बाढ़हि असुर अधम अभिमानी॥
करहि अनीति जाइ नहि बरनी। सीदहि बिप्र धेनु सुर धरनी॥
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा। हरहि कृपानिधि सज्जन पीरा॥

(रा०च०मा० १।१२१।६—८)

अर्थात् जब-जब धर्मका हास होता है और नीच अभिमानी राक्षस बढ़ जाते हैं तथा वे ऐसा अन्याय करते हैं कि जिसका वर्णन नहीं हो सकता। जिससे ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी कष्ट पाते हैं, तब-तब वे कृपानिधि प्रभु भाँति-भाँतिके [दिव्य] शरीर धारणकर सज्जनोंकी पीड़ा हरते हैं। यह ईश्वरका सत्य-संकल्प हैं। इसी क्रममें अपना संकल्प सिद्ध करने हेतु श्रीहरिका रामावतार हुआ है—

असुर मारि थापहि सुरन्ह राखहि निज श्रुति सेतु।

जग बिस्तारहि बिसद जस राम जन्म कर हेतु॥

(रा०च०मा० १।१२१)

अर्थात् वे असुरोंको मारकर देवताओंको स्थापित करते हैं, अपने [श्वासरूप] वेदोंकी मर्यादाकी रक्षा करते हैं और जगत्में अपना निर्मल यश फैलाते हैं। श्रीरामचन्द्रजीके अवतारका यह कारण है। एतदर्थ प्रभुने अपने वन-गमनकी योजना पहले ही बना ली थी। अध्यात्मरामायणमें उद्धृत है कि वनगमनके सम्बन्धमें प्रभु श्रीराम नारदजीसे कहते हैं—

रावणस्य विनाशार्थं श्वो गन्ता दण्डकाननम्।

चतुर्दश समास्तत्र ह्युषित्वा मुनिवेषधृक्॥

(अ०रामा० २।१।३८)

अर्थात् रावणका वध करनेके लिये मैं कल दण्डकारण्यको जाऊँगा और वहाँ चौदह वर्ष मुनिवेष धारणकर रहूँगा। प्रभुके इस प्रयोजनकी पूर्तिमें सरस्वती देवीने सहयोग प्रदान किया। अध्यात्मरामायणके अयोध्याकाण्डमें द्वितीयसर्गके ४४ से ४६ श्लोकोंके अनुसार, इसी समय देवताओंने सरस्वतीदेवीसे आग्रह किया कि—हे देवि! तुम यत्नपूर्वक भूलोकमें अयोध्यापुरीमें जाओ और वहाँ ब्रह्माजीकी आज्ञासे रामचन्द्रजीके राज्याभिषेकमें विघ्न उपस्थित करनेके लिये यत्न करो। प्रथम तो तुम मन्थरामें प्रवेश करना और फिर कैकेयीमें। हे शुभे! इस प्रकार विघ्न उपस्थित हो जानेपर तुम फिर स्वर्गलोकको लौट आना।* इसपर सरस्वतीजीने ‘बहुत अच्छा’ कहकर वैसा ही किया और प्रथम मन्थरामें प्रवेश किया। इस प्रसंगका श्रीरामचरितमानसमें बड़ी ही रोचक शैलीमें वर्णन किया गया है तथा देवताओंके इस कुचक्रको उनकी स्वार्थ-लिप्सा बतायी गयी है। देवता कहते हैं—

बिपति हमारि बिलोकि बड़ि मातु करिअ सोइ आजु।

रामु जाहि बन राजु तजि होइ सकल सुरकाजु॥

(रा०च०मा० २।११)

अर्थात् हे माता! हमारी बड़ी विपत्तिको देखकर आज वही कीजिये, जिससे श्रीरामचन्द्रजी राज्य त्यागकर वनको चले जायँ और देवताओंका सब कार्य सिद्ध हो। और तब—

बार बार गहि चरन सँकोची। चली बिचारि बिबुध मति पोची।

ऊँच निवासु नीचि करतूती। देखि न सकहि पराइ बिभूती॥

बार-बार चरण पकड़कर देवताओंने सरस्वतीजीको

* एतस्मिन्नन्तरे देवा देवीं वाणीमचोदयन् । गच्छ देवि भुवो लोकमयोध्यायां प्रयत्नतः ॥

रामाभिषेकविघ्नार्थं यतस्व ब्रह्मावक्यतः । मन्थरां प्रविशस्वादौ कैकेयीं च ततः परम् ॥

ततो विघ्ने समुत्पन्ने पुनरेहि दिवं शुभे । तथेत्युक्त्वा तथा चक्रे प्रविवेशाथ मन्थराम् ॥

संकोचमें डाल दिया। तब वे यह विचारकर चलीं कि देवताओंकी बुद्धि ओछी है। इनका निवास तो ऊँचा है, पर इनकी करनी नीची है। ये दूसरेका ऐश्वर्य नहीं देख सकते। तदपि रामकाजका विचार करके वे रानी कैकेयीकी मन्दबुद्धि दासी मन्थराकी बुद्धि भ्रमित कर देती हैं और वापस चली जाती हैं—

नामु मंथरा मंदमति चेरी कैकड़ केरि।

अजस पेढारी ताहि करि गई गिरा मति फेरि॥

(रा०च०मा० २।१२)

भ्रमितमति मन्थराने रानी कैकेयीसे अनेक प्रकारके कुटिल किस्से कहकर उन्हें अन्ततः समझा ही लिया कि—

दुइ बरदान भूप सन थाती। मागहु आजु जुड़ावहु छाती।
सुतहि राजु रामहि बनबासु। देहु लेहु सब सवति हलासु॥

तुम्हारे दो वरदान राजाके पास धरोहर हैं। आज उन्हें राजासे माँगकर अपनी छाती ठंडी करो। पुत्रको राज्य और रामको वनवास दो तथा सौतका सारा आनन्द तुम ले लो। होनहारवश ऐसा करनेके लिये कैकेयीके मनमें दासी मन्थराकी बातोंका विश्वास हो गया। उसने वही किया, जैसा मन्थराने समझाया। इस प्रकार '**जसु अपजसु बिधि हाथ**'के न्यायसे रानी कैकेयीके हाथ अपयश ही लगता है, किंतु महाराजा दशरथ और रानी कैकेयी तो निमित्तमात्र हैं, और वे अपने भाग्यका भोग ही प्राप्त करते हैं। वस्तुतः श्रीरामका वनगमन पूर्वनियोजित है, उसमें राजा या कैकेयी कारण नहीं—ऐसा अध्यात्मरामायणका मत है। उक्त ग्रन्थके अयोध्याकाण्ड, पंचम सर्ग, श्लोक २४ व २५ के अनुसार—

राजा वा कैकेयी वापि नात्र कारणमण्वपि ।

पूर्वेद्युर्नारदः प्राह भूभारहरणाय च ॥

रामोऽप्याह स्वयं साक्षाच्छ्रुवो गमिष्याम्यहं वनम् ।

अतो रामं समद्विश्य चिन्तां त्यजत बालिशाः ॥

अर्थात् मुनिवर वामदेव कहते हैं—इनके (श्रीरामके) वनगमनमें राजा या कैकेयी अणुमात्र भी कारण नहीं हैं। कल ही इनसे नारदजीने पृथ्वीका भार उतारनेके लिए प्रार्थना की थी। उस समय स्वयं रामने भी उनसे यही

कहा था कि कल मैं वनको जाऊँगा। अतः हे भोले भाइयो! आपलोग रामके लिये कोई चिन्ता न करें।

इसीके सापेक्ष सन् १६४३ ई० का भक्त कवि लालदासप्रणीत अवध-विलास भी ध्यातव्य है। ग्रन्थमें रामजन्मसे लेकर उनके वन-गमनतककी कथाको ग्रहण किया गया है। अवध-विलासके अनुसार राम-वन-गमनकी घटना कैकेयी और रामके मध्य बनी योजनाका एक अंग थी। रावणवधके लिये नारदद्वारा प्रेरित किये जानेपर रामकी उदासी देखकर कैकेयी रामसे उसका कारण पूछती हैं। राम रावण-वधके लिये वन जानेकी बात करते हैं—

बोले राम मोहि वनचारी । राजहि कहि कर सो हितकारी ॥

रामने कहा—‘हे माते !’ मुझे [रावणवधहेतु] वनवासी होना है । अतः इसे राजा (दशरथ) —से कहकर मेरा हित कीजिये—रामकी इच्छा जानकर कैकेयी कहती हैं कि रामको लोककल्याणार्थ वनगमन कार्य अभीष्ट है । अतः वह इस कार्यमें सहायक होगी । राम कैकेयीको सचेत करते हैं—
मेरे बिरह पिता पुनि मरिहैं । तोहि अजस अति होइन परिहैं ॥
भरत भोग तजि जोगी होई । कौसल्या दुख करिहैं सोई ॥
अवधपरीके वासी जेते । हूँ हूँ सबहि उदासी तेते ॥

[हे माते!] मेरे वियोगमें पिता (दशरथ)-का निधन हो जायगा। आपको अत्यन्त लोक-अपयशका भागी होना पड़ेगा, भरत राजभोगोंको त्यागकर योगी हो जायगा, माता कौसल्या दुखी होंगी, अवधपुरवासी सभी उदासीन हो जायँगे।

तथापि वन-गमनकी पूर्वनिर्धारित कल्याणकारी योजनाको कैकेयी क्रियान्वित करती हैं और राम रावण-वधहेतु वनको तदनुरूप प्रस्थान करते हैं। इस प्रकार अवध-विलास ग्रन्थमें राम-वनगमनके अन्तर्गत दो तथ्य स्पष्ट उभरकर आये हैं—(१) श्रीराम वन-गमनकी जनकल्याणकारी योजना पूर्वनिर्धारित थी। (२) उक्त योजनाका क्रियान्वयन सर्वोपरि मानकर रानी कैकेयीने अनेक दुखों और मर्मान्तक लोक-अपयशको भी स्वीकार किया। इस दृष्टिकोणसे रानी कैकेयीका चरित उदात्त एवं अत्यन्त महिमापूर्ण है।

गोस्वामीजीका काशीप्रवास *

(डॉ० श्रीगौरीशंकरजी गुप्त)

पुण्यपुरी काशीसे प्रातःस्मरणीय गोस्वामी तुलसीदासजीका अत्यन्त घनिष्ठ और अभिन्न सम्बन्ध रहा है। उनके जीवनका अधिकांश समय यहाँ रामकथाके वक्ता, साहित्यप्रणेता तथा साधकके रूपमें व्यतीत हुआ। यहाँ उन्होंने पन्द्रह वर्षतक शेष सनातनजीसे वेद-वेदांगका अध्ययन भी किया था। काशीमें ही उन्हें हनुमान्जीके दर्शन हुए, जिसके फलस्वरूप भगवान् श्रीरामके दर्शनका मार्ग प्रशस्त हुआ। यहाँके प्रह्लादघाट, असीघाट, तुलसीघाट और गोपालमन्दिरसे वे विशेषरूपसे जुड़े रहे। प्रह्लादघाटपर वे अपने मित्र पं० श्रीगंगारामजी ज्योतिषीके यहाँ रहे, असीघाटपर रहते हुए उन्होंने शरीरत्याग किया और गोपालमन्दिरकी वाटिका-गुफामें रहकर 'विनय-पत्रिका' की रचना की। यों बारह हनुमान्-मन्दिरोंकी स्थापनाके कारण उनका सम्बन्ध अन्य मुहल्लों या क्षेत्रोंसे भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं रहा। काशीमें श्रीरामका चरित्र रामलीलाके माध्यमसे जन-जनतक पहुँचानेका श्रेय तुलसीदासजीको ही है। यहाँ श्रीकृष्ण और नागनथैयाकी प्रसिद्ध लीला भी उन्हींकी देन है। मानसरोवरके निकट उनको काकभुशुण्डिजीके दर्शन हुए और तभीसे उन्होंने काशीमें रामकथामृत-पान कराना आरम्भ किया।

प्रह्लादघाटपर निवास करते हुए उनमें कवित्व शक्ति प्रस्फुटित हुई और वे संस्कृतमें पद्यरचना करने लगे, किंतु दिनमें वे जो पद्य रचते, रातमें लुप्त हो जाते। यह नित्यकी घटना थी। एक सप्ताह इसी तरह बीता। आठवें दिन भगवान् शंकरने उन्हें स्वप्नमें आदेश दिया कि तुम अपनी भाषामें काव्य-रचना करो। गोस्वामीजीकी निद्रा भंग हो गयी और वे उठ बैठे। उन्होंने शिव-पार्वतीको अपने समक्ष उपस्थित पाया और उन्हें साष्टांग प्रणाम किया। शिवजी बोले—तुम अयोध्यामें रहते हुए भाषामें रामकाव्यकी रचना करो। मेरे आशीर्वादसे तुम्हारी रचना

'सामवेद' के समान फलवती होगी। इतना कहकर श्रीगौरीशंकर अन्तर्धान हो गये। शिवादेशके अनुसार गोस्वामीजी अयोध्या चले गये और वहाँ उन्होंने 'श्रीरामचरितमानस' की रचना की। तदनन्तर काशी लौटकर शिव-पार्वतीको 'मानस' सुनाया।

यहाँ गोस्वामीजीके 'श्रीरामचरितमानस' की मूल प्रति विश्वनाथ-मन्दिरमें रखी गयी। प्रातः मन्दिरके पट खुले तो देखा गया—पुस्तकपर लिखा है—'सत्यं शिवं सुन्दरम्' और नीचे भोलेनाथ शंकरके हस्ताक्षर हैं। उस समय उपस्थित जनोंने 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' की ध्वनि भी सुनी।

जब काशीके पण्डितोंने सुना कि ऐसी घटना हुई है तो वे उद्वेलित हो उठे, उनके मनमें ईर्ष्या होने लगी। वे तुलसीदासजीकी निन्दा करने लगे और 'मानस' को नष्ट करनेका उपक्रम भी। इसे गायब करनेके लिये दो चोर भेजे गये। चोरोंने देखा कि तुलसीदासजीकी कुटियाके बाहर श्याम और गौरवर्णके दो अत्यन्त सुन्दर



वीर धनुष-बाण लिये पहरा दे रहे हैं। उनके दर्शनसे चोरोंकी बुद्धि पवित्र हो गयी, वे चोरी छोड़कर भगवद्भजन करने लगे। तुलसीदासजीने अपने ग्रन्थके कारण प्रभुको कष्ट हुआ जान अपना सारा सामान लुटा

गोस्वामीजी असीघाट लौटे और उन्होंने कर्णघण्टा स्थित रामकथास्थलका पता लगाया। वहाँ प्रेतके कथनानुसार

प्रह्लादघाटके निवासी पं० श्रीगंगारामजी काशिराजके राजज्योतिषी थे। मित्रताके कारण गोस्वामी तुलसीदासजी उन दिनों वहीं रहते थे। एक बार काशिराजके यहाँ कोई घटना घटी, जिसके विषयमें गंगारामजीसे पूछा गया।

कदाचन ॥

हनुमान्, अंजनीसूनु, वायुपुत्र, महाबल (महाबलवान्), रामेष्ट (रामके प्यारे), फाल्गुन (अर्जुन)–के सहायक (रूपमें उनकी ध्वजामें निवास करनेवाले), पिंगाक्ष (पीली आँखोंवाले), अमितविक्रम (अनन्त पराक्रमशाली), उदधिक्रमण (समुद्रको लाँघ जानेवाले), सीता-शोक-विनाशन (सीताके शोकका नाश करनेवाले), लक्ष्मणप्राणदाता (लक्ष्मणको संजीवनी बूटी लाकर जिलानेवाले) तथा रावणदर्पहारी—महान् आत्मबलसे सम्पन्न कपिराज हनुमान्जीके इन बारह नामोंका जो मनुष्य सोते, जागते अथवा कहीं भी यात्रा करते समय पाठ करता है, उसे किसी प्रकारका भी भय नहीं होता और वह संग्राममें विजयी होता है। राजद्वार एवं गहन वन (आदि) किसी भी स्थानमें उसे कभी किसी प्रकारका भय नहीं रहता। [आनन्दरामायण]

निखारिये अपने व्यक्तित्वको

(श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी)

किसी भी व्यक्तिकी पहचान उसके व्यक्तित्वसे होती है। प्रभावशाली व्यक्तित्ववालोंकी ही समाज तथा राष्ट्रमें प्रतिष्ठा होती है। यदि आप चाहते हैं कि आपका व्यक्तित्व विशाल, आकर्षक, सरल, शान्त एवं प्रभावशाली हो तो निम्न सात बातोंपर विशेष ध्यान देना होगा—

१-आचरण निष्कपट रखें—व्यक्तित्व-विकासके लिये सबसे महत्वपूर्ण बात है अपने जीवनमें आचरणको निष्कपट रखना। फूलोंमें जो स्थान सुगन्धका है, फलोंमें जो स्थान मिठासका है, भोजनमें जो स्थान स्वादका है, ठीक, वही स्थान जीवनमें आचरणका है। अपने आचरणको ऐसा बनायें कि जहाँ भी जायँ आपका आदर-सत्कार हो।

२-सद्गुणोंको अपनायें—भड़कीले अथवा कीमती कपड़े पहननेसे कभी व्यक्तित्व आकर्षक नहीं होता है। अधिक आभूषणोंके शृंगार करनेसे भी व्यक्तित्व नहीं निखरता, निखरता है केवल चरित्रसे। चरित्रको उसके गुण ही सजाते, सँवारते हैं। गुण ही व्यक्तिको महान् बनाकर समाज एवं राष्ट्रमें प्रतिष्ठित करते हैं। गुणहीन व्यक्ति आदरके पात्र नहीं होते हैं। जबकि गुणवान् व्यक्ति सर्वत्र आदर और यशके पात्र होते हैं। व्यक्तिके सात्त्विक गुण ही उसके व्यक्तित्वकी कसौटी होते हैं, क्योंकि सात्त्विक गुण ही व्यक्तिकी वाणीमें विनम्रता, व्यवहारमें सरलता और विचारोंमें शुचिता लाते हैं।

संस्कृतमें एक सूक्ति है, जिसका तात्पर्य है कि मनुष्यको न तो केयूर (बाजूबन्द), न चन्द्रमाके समान उज्ज्वल हार, न स्नान, न उबटन, न फूल और न सजाये हुए बाल ही सुशोभित कर सकते हैं, वह यदि संस्कारसम्पन्न वाणी धारण करे तो एकमात्र वही उसकी शोभा बढ़ा सकती है, इसके अतिरिक्त और जितने आभूषण हैं, वे तो नष्ट हो जाते हैं, सच्चा भूषण तो वाणी ही है—

केयूरा न विभूषयन्ति पुरुषं हारा न चन्द्रोज्ज्वला

न स्नानं न विलेपनं न कुसुमं नालंकृता मूर्धजाः।

वाण्येका समलङ्करोति पुरुषं या संस्कृता धार्यते

क्षीयन्ते खलु भूषणानि सततं वाग्भूषणं भूषणम्॥

३-आत्मविश्वासी बनें—आत्मविश्वासको सदा दृढ़ बनाये रखे। जिसके भीतर आत्मविश्वास होता है, वह कठिन-से-कठिन परिस्थितिमें भी घबराता नहीं है। जिसने आत्मविश्वास खो दिया मानो उसने सर्वस्व खो दिया। आत्मविश्वासकी शक्तिसे ही व्यक्तित्व निखरता है। आत्मविश्वासी व्यक्तिके मुखमण्डलकी आभा कभी मलिन नहीं होती है, अपितु चेहरा कान्तियुक्त रहता है।

४-समयका आकलन करें—मनुष्यके जीवनमें समय सबसे मूल्यवान् है। समयकी गति, स्वभाव और प्रवृत्तिको जो व्यक्ति पहचानकर कार्य करता है, उसको ही सफलता मिलती है। जो व्यक्ति समयपर उचित निर्णय नहीं ले सकते हैं, उनकी बादमें असफलता निश्चित होती है। समयका सदुपयोग करनेवाले व्यक्ति ही ऊँचाईके शिखरपर पहुँचते हैं। आज हर मनुष्य स्वयंसे अधिक दूसरोंके बारेमें सोचता है। किसी दूसरेके बारेमें सोचकर अपना अमूल्य समय नहीं गँवाना चाहिये। अपने कार्यको निर्धारित समयमें पूर्ण करनेवाले व्यक्ति ही प्रतिष्ठित होते हैं।

५-दूसरोंके प्रति स्नेह व सहानुभूति रखें—दूसरोंके प्रति आपके हृदयमें स्नेह और सहानुभूति होनी चाहिए। जब आप किसीको प्यार देंगे तो दूसरा भी आपपर प्यार लुटायेगा। दूसरोंको अपमानित न करें और न ही कभी दूसरोंकी शिकायत करें। याद रखें कि अपमानके बदलेमें अपमान ही मिलता है। दूसरोंमें जो भी अच्छे गुण हैं, उनकी ईमानदारीके साथ दिल खोलकर प्रशंसा करें। झूठी प्रशंसा कदापि न करें। यदि आप किसीकी प्रशंसा नहीं कर सकते तो कम-से-कम दूसरोंकी निंदा कभी भी न करें। किसीकी निंदा करके आपको कभी भी किसी प्रकारका लाभ नहीं मिल सकता, उल्टे आप उसकी नजरोंमें गिर सकते हैं। अपने स्वभावसे सदैव दूसरोंके मनमें अपने प्रति तीव्र आकर्षणका

७-कुव्यसनों एवं दुष्प्रवृत्तियोंको त्यागें—वही व्यक्ति महान् होता है, जिसमें कोई कुव्यसन या कुप्रवृत्ति नहीं होती है। कुव्यसनोंसे शारीरिक दुर्बलता आती है

जरा सोचिये, जिस व्यक्तिने नशीली वस्तुओंको अपना रखा हो, दुष्प्रवृत्तियों, जुआ आदिका शिकार हो चुका हो, उसका व्यक्तित्व कैसे निखर सकता है ? मादक द्रव्योंका सेवन करनेके लिये जो प्रेरित करता है, वे मित्र नहीं परम शत्रु हैं । भगवान् ने हमें मूल्यवान् जीवन और अनमोल शरीर इसलिए नहीं दिया कि हम जानबूझकर उसे मृत्युके हवाले कर दें । यदि आप अपना व्यक्तित्व आदर्श, अनुकरणीय एवं महान् बनाना चाहते हैं तो कभी गलत राह नहीं अपनायें, सदा सही मार्गपर चलकर ही आप महान् व्यक्तित्वके अधिकारी हो सकते हैं ।

(श्रीमती डॉ० उर्मिलाजी किशोर)

हर हृदय में प्रेम तू है, प्रेम मन सँवारूँ ।
 सृष्टि का सौन्दर्य तू, सौन्दर्य में निहारूँ,
 कोटि-कोटि नाम तेरे, कौन-सा पुकारूँ ॥
 रम रहा है विश्व भर में, राम मैं विचारूँ,
 है सहस्र नाम के सम, राम नाम धारूँ ।
 है राम नाम सत्य-सार, राम ही पुकारूँ,
 कोटि-कोटि नाम तेरे, कौन-सा पुकारूँ ॥
 है सदा आनन्दमय तू, वही उर सँवारूँ,
 सुन रहा हर नाम से, जिस नाम से पुकारूँ ।
 है अनन्त नाम वाला, कौन-सा विचारूँ,

[गताङ्क ६ पृ०-सं० २८ से आगे]

(९) श्रीवैद्यनाथ



पटना-कलकत्ता रेलमार्गपर किउल स्टेशनसे दक्षिण-पूर्व १००० किलोमीटरपर देवघर है, इसे ही वैद्यनाथधाम कहते हैं। यहींपर वैद्यनाथेश्वर ज्योतिर्लिंग है। इसकी कथा इस प्रकार है—रावणने अतुल बल-सामर्थ्यकी प्राप्तिकी इच्छासे भगवान् शिवकी आराधना प्रारम्भ की। वह ग्रीष्मकालमें पंचाग्निसेवन करता था, जाड़ेमें पानीमें रहता था एवं वर्षा-ऋतुमें खुले मैदानमें रहकर तप करता था। बहुत कालतक इस उग्र तपसे भी जब शिवजीने प्रत्यक्ष दर्शन नहीं दिया, तब उसने पार्थिव लिंगकी स्थापना की और उसीके पास गड्ढा खोदकर अग्नि प्रज्वलित की। वैदिक विधानसे उस अग्निके सामने उसने शिवजीकी विधिवत् पूजा की। रावण अपने सिरको काट-काटकर चढ़ाने लगा। शिवजीकी कृपासे उसका कटा हुआ सिर पुनः जुड़ जाता था। इस प्रकार उसने नौ बार सिर काटकर चढ़ाया। जब दसवीं बार वह सिर चढ़ानेको उद्यत हुआ, तब भगवान् शिव प्रकट हो गये। भगवान् शिवने रावणसे कहा—‘मैं तुम्हारी भक्तिसे प्रसन्न हूँ,

तुम अपना अभीष्ट वर माँग लो।' रावणने उनसे अतुल बल-सामर्थ्यके लिये प्रार्थना की। भगवान् शिवने उसे वह वर दे दिया। रावणने उनसे लंका चलनेके लिये निवेदन किया। तब भगवान् शिवने उसके हाथमें एक शिवलिंग देते हुए कहा—'रावण! यदि तुम इसे मार्गमें कहीं भी पृथिवीपर रख दोगे तो यह वहीं अचल होकर स्थित हो जायगा। अतः इसे सावधानीसे ले जाना।' रावण शिवलिंगको लेकर चलने लगा। शिवजीकी मायासे मार्गमें उसे लघुशंकाकी इच्छा हुई, जिसे वह रोक न सका। उसने पासमें खड़े हुए एक गोपकुमारको देखा और निवेदन करके वह शिवलिंग उसीके हाथमें दे दिया। वह गोप उस शिवलिंगके भारको सहन न कर सका और उसने वहीं पृथिवीपर उसे रख दिया। धरतीपर पड़ते ही वह शिवलिंग अचल हो गया। तत्पश्चात् रावण जब उसे उठाने लगा, तब वह शिवलिंग उठ न सका। हताश होकर रावण घर लौटा। यही शिवलिंग 'वैद्यनाथेश्वर ज्योतिर्लिंग'के नामसे जगत्में प्रसिद्ध हो गया। इस घटनाको जानकर ब्रह्मा, इन्द्रादि समस्त देवगण वहाँ उपस्थित हो गये। देवगणने भगवान् शंकरका प्रत्यक्ष दर्शन किया। देवताओंने उनकी प्रतिष्ठा की। अन्तमें देवगण उन 'वैद्यनाथ महादेव' की स्तुति करके अपने-अपने भवनको चले गये। वैद्यनाथ महादेवकी पूजा-अर्चासे समस्त दुःखोंका शमन होता है और सुखोंकी प्राप्ति होती है। यह दिव्य शिवलिंग मुक्तिप्रदायक है।

यहाँ दूर-दूरसे जल लाकर चढ़ानेका अत्यधिक
माहात्म्य वर्णित एवं लोकविश्रुत है। श्रद्धालुजन कन्धेपर
काँवर लिये यहाँकी यात्रा सम्पन्न करते हैं।* [क्रमशः]

(२) प्रेमसे दिख जाना—इस जगत्में विभिन्न रूपोंमें केवल भगवान् हैं । उनको प्रेम देनेसे उनके उस रूपके दर्शन हो जाते हैं, जिसका वर्णन ग्रन्थोंमें आया है । श्रीरामचरितमानसमें आया है—

(७) भगवान्की महिमा—भगवान् समर्थ हैं, सदैव हैं, सर्वत्र हैं, सर्वज्ञ हैं, सबमें हैं, सबके हैं,

परम सुहृद हैं। पतितपावन, करुणासागर हैं, क्षमासिन्धु हैं, दीनबन्धु हैं, दीनानाथ हैं, मेरे सच्चे माता-पिता हैं।

इस स्मृतिका प्रभाव यह होगा कि आप निश्चिन्त, निर्भय, निडर, निर्मल, निर्विकार, निर्मम, निष्काम, निर्वैर और निरभिमान हो जायँगे।

(८) विधान मंगलकारी—अपनी तरफसे बुद्धि और विवेककी सीमातक पूरी सावधानी रखनेके बाद भी अपने-आप अथवा किसी व्यक्तिके माध्यमसे आपके जीवनमें जिस प्रतिकूल परिस्थितिका निर्माण हो जाता है, उसका नाम है—भगवान्का विधान। अपनी तरफसे परिवारजनोंको भगवान्के स्वरूप या मेहमान मानकर सद्भाव रखने, स्नेह, सेवा और प्रेमका व्यवहार करनेके बाद भी यदि कोई परिवारजन आपसे नाराज रहता है अथवा आपके साथ प्रतिकूल व्यवहार करता है—वह भी भगवान्का विधान है। भगवान्के प्रत्येक विधानमें आपका हित निहित होता है।

इस स्मृतिका प्रभाव यह होगा कि आपको प्रतिकूल परिस्थितिके आनेका भय नहीं लगेगा और प्रतिकूल परिस्थिति आने एवं परिवारजनोंद्वारा प्रतिकूल व्यवहार करनेपर लेशमात्र भी दुःख नहीं होगा, प्रत्युत आप इस आधारपर शान्त एवं प्रसन्न रहेंगे कि इसमें मेरा हित छिपा हुआ है। भगवान् जो करते-करवाते हैं, अच्छा ही करते हैं।

(९) प्रारब्धसे मिलना—आपके शरीरको दो तरहकी चीजें मिलती हैं—सुख-सामग्री और सुख-सुविधाएँ। खाने-पीनेकी सभी चीजोंको सुख-सामग्री कहते हैं। जो चीजें शरीरको ऊपरसे मिलती हैं, जैसे—विशाल मकान, कीमती जेवर एवं कपड़े, महँगी कारें, हवाई यात्राएँ आदि—इनको सुख-सुविधाएँ कहते हैं। ये दोनों चीजें न तो रुपयेसे मिलती हैं और न परिवारजनोंसे। रुपये और परिवारजन तो इनके मिलनेमें केवल माध्यम बनते हैं। ये चीजें पूर्णतया आपके प्रारब्ध (भाग्य) -से मिलती हैं। प्रारब्ध बन जाता है बहुत पहले और शरीर बनता है बादमें। दोनोंका

बनाते हैं भगवान्। केवल असाधारण परिस्थितियोंको छोड़कर प्रारब्धमें कोई परिवर्तन नहीं होता है। आपके पास न रुपये हैं न परिवारजन, फिर भी यदि आपके प्रारब्धमें उच्च कोटिकी सुख-सामग्री और सुख-सुविधाएँ हैं तो वे आपको मिलेंगी। ऐसी स्थितिमें रुपये दूसरे व्यक्तिके लगेंगे, दूसरा व्यक्ति आपको ये दोनों चीजें देगा। संतवाणी है—*दाने-दानेपर लिखा है खानेवालेका नाम।*

इस स्मृतिका प्रभाव यह होगा कि आप किसीके साथ किसी भी प्रकारकी बुराई नहीं करेंगे, आपको यह चिन्ता नहीं रहेगी कि रुपये अथवा परिवारजन न रहे तो मुझे भोजन, वस्त्र, सुविधाएँ कौन देगा। आप अपने कार्यको भगवान्‌का कार्य मानकर पूरी सावधानीसे करेंगे।

(१०) नुकसान नहीं करता—नुकसान दो प्रकारका होता है—शारीरिक नुकसान, अर्थात् शरीरको चोट पहुँचाना; आर्थिक नुकसान, अर्थात् रुपये, सामान, सम्पत्तिका नुकसान। आपका कोई भी परिवारजन, सम्बन्धी, मित्र, सहयोगी, अधिकारी आपका नुकसान नहीं करता है, वह आपका नुकसान कर ही नहीं सकता। आपको होनेवाले नुकसानके नौ कारण हैं—आपके कर्म, आपका भाग्य, आपका प्रारब्ध, आपका खराब समय, आपकी असावधानी, होनहार, देवदोष, पितृदोष, भगवान्‌का विधान, स्वयं भगवान्। कभी नुकसान अपने-आप हो जाता है, कभी परिवारजन उसमें माध्यम बन जाते हैं। श्रीरामचरितमानसमें आया है—
करम प्रधान बिस्व करि राखा । जो जस कइ सो तस फल चाखा॥

(२।२१९।४)

अर्थात् भगवान्ने विश्वमें कर्मको ही प्रधान कर रखा है। जो जैसा करता है, वह वैसा ही फल भोगता है।

इस स्मृतिका प्रभाव यह होगा कि नुकसान करनेवाले परिवारजन, मित्र आदिपर आपको क्रोध नहीं आयेगा, आप इसके साथ लड़ाई-झगड़ा नहीं करेंगे। अपने नुकसानके लिये आप किसी दूसरे व्यक्तिको दोषी नहीं मानेंगे।

प्रभुकी स्मृति—यदि आपको अपने दैनिक व्यवहारिक जीवनमें इन बातोंकी स्मृति रहेगी तो आप अपने जीवनमें शान्त एवं प्रसन्न रहेंगे। अन्तिम समयमें आपको भगवान्की स्मृति रहेगी। आपका मानव-जीवन सफल हो जायगा।



(श्रीरामलालजी श्रीवास्तव)

(६।४७)



महात्मा गम्भीरनाथके पूर्वाश्रमके सम्बन्धमें कुछ भी निश्चितरूपसे कहना या लिखना आसान नहीं है। उनका जन्म विक्रमीय उन्नीसवीं शताब्दीके चौथे चरणमें काश्मीर प्रदेशके एक गाँवके समृद्ध परिवारमें हुआ था।

सालतक रह गये। उनका आध्यात्मिक स्तर ऊँचा हो गया। उन्होंने महती योगशक्ति प्राप्त की।

साधकको छः अवस्थाओंसे निकलना पड़ता है। वे कुटीचक, बहूदक, हंस, परमहंस, तुरीयातीत और अवधूतकी अवस्थाएँ हैं। एक स्थानपर रहकर साधना करनेवालेको 'कुटीचक' विशेषणसे अलंकृत किया जाता है। 'बहूदक' अनेक स्थानोंमें घूम-घूमकर तप और साधना करनेवालेकी संज्ञा है। हंस, परमहंस, तुरीयातीत और अवधूतकी अवस्थामें साधक जीवन्मुक्ति, सद्-ज्ञान-प्राप्ति और आत्मसाक्षात्कारसे समृद्ध होता है। योगिराज गम्भीरनाथने अभीतक कुटीचकव्रतका अनुसरण किया था। प्रयागमें तप करनेके बाद उन्होंने 'बहूदक'-जीवन अपनाया। उन्होंने अकेले फिरनेका संकल्प किया। महायोगी गोरखनाथकी उक्ति—'ज्ञानके समान गुरु नहीं मिला, न चित्तके समान चेला मिला और न मनके समान मेल-मिलापवाला मिला; इसलिये गोरख अकेले फिरते हैं'—उनकी स्मृतिमें जाग उठी।

ग्यान सरीषा गुरू न मिलिया

चित्त सरीषा चेला।

मन सरीषा मेलु न मिलिया

तीथैं गोरख फिरै अकेला॥

(गोरखबानी, सबदी १८९)

उन्होंने परिव्राजक-जीवनमें प्रवेश किया। पूरे छः सालतक बाबा गम्भीरनाथ परिव्राजक-जीवनका रसास्वादन करते रहे। वे प्रायः पैदल भ्रमण करते थे। उन्होंने कैलास, मानसरोवर, अमरनाथ, द्वारका, गंगासागर तथा रामेश्वरम् आदि तीर्थोंका दर्शन किया। उन्होंने भगवती नर्मदाकी परिक्रमा चार सालमें पूरी की और अमरकण्टकपर अधिक समयतक रह गये। नर्मदा-परिक्रमाके समय उनके जीवनमें एक विलक्षण घटना घटी थी, जो उनकी अपार योगशक्ति और महती तपस्याकी परिचायिका है। बाबा गम्भीरनाथ नर्मदाकी परिक्रमा कर रहे थे। उनका मन एक तटीय रम्य स्थानमें लग गया। वहाँ एक कुटी थी। महात्मा गम्भीरनाथने उसी कुटीमें निवास किया।

उनका दर्शनकर अदृश्य हो गया। दूसरे और तीसरे दिन भी प्रभात-कालमें बाबा गम्भीरनाथने उसको देखा, उन्होंने इस ओर कुछ ध्यान न दिया। वे अपने गम्भीर चिन्तनमें तल्लीन थे। तीसरे दिन कुटीमें रहनेवाला एक ब्रह्मचारी, जो कुछ दिनोंके लिये बाहर था, आ गया। वह उस कुटीमें बारह सालसे निवास करता था। योगिराज गम्भीरनाथके आगमनसे वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसने आप-बीती सुनायी कि 'मैं इस कुटीमें बारह सालसे रहता हूँ। इसीके निकट एक बहुत बड़े महात्मा सर्पके वेषमें रहते हैं। उन्हींके दर्शनके लिये मैं ठहरा हूँ।' महात्मा गम्भीरनाथने सर्प-दर्शनकी बात कही; ब्रह्मचारी आश्चर्यचकित हो गया। उसने कहा कि 'महाराज! आपका तपोबल स्तुत्य है, जिस कार्यको मैं बारह सालमें भी न कर सका, वह बिना किसी प्रयासके आपने कर दिखाया। आप धन्य हैं कि सर्प-वेषमें रहनेवाले महात्माने तीनों दिन आपपर कृपादृष्टि की।' महात्मा गम्भीरनाथने नर्मदा-परिक्रमा समाप्त की।

सम्बत् १९३७ वि० में योगी गोपालनाथने शिवधाम प्राप्त किया। महात्मा गम्भीरनाथने परिश्रमण-कालमें इस घटनाको सुना। वे गुरुके प्रति आदर प्रकट करनेके लिये गोरखपुर आये। तत्कालीन महन्त श्रीबलभद्रनाथजीके विशेष आग्रहपर वे कुछ दिनोंतक मठमें रह गये। उसके बाद वे बिहार प्रदेशके गया जनपदके कपिलधारा नामक स्थानमें आकर तप करने लगे। गयाकी पहाड़ियोंमें चिरकालसे तपस्वी, योगी और संतजन अपना निवास बनाते आये हैं। गयानगरसे थोड़ी दूरपर अत्यन्त शान्त, रमणीय और निर्जन कपिलधारा स्थानमें योगी गम्भीरनाथने तबतक तप करनेका निश्चय किया, जबतक अवधूत अवस्थाकी प्राप्ति न हो जाय। अक्कू नामके एक व्यक्तिने उनके चरणोंमें श्रद्धा समर्पित की। उनकी भोजन-व्यवस्था तथा सेवा आदिका सहज अधिकार उसे प्राप्त हो गया। महात्मा गम्भीरनाथके पास कौपीन, एक कम्बल और खप्परके सिवा और कुछ भी न था। कुछ दिनोंके बाद नृपतिनाथ नामके एक श्रद्धालु योग-साधकने अक्कूका कार्य हलका कर दिया। नृपतिनाथ

परिव्राजक-कालमें महाराणा उदयपुर तथा महाराजा काश्मीर आदिने बड़ी चेष्टा की कि योगिराजकी चरण-धूलि राजप्रासादमें पड़ जाय; पर ऐसा कभी सम्भव नहीं हो सका। बाबाके प्रसिद्ध सेवक माधवलाल पण्डाने बड़ा प्रयत्न किया कि एक क्षणके लिये भी बाबा उसके घर चलें; पर बाबा गम्भीरनाथ अपने नियमपर अडिग रहे। एक बार उनका निजी सेवक बहुत बीमार पड़ गया। उसका भाई मुन्नी दौड़ता हुआ बाबाके पास आया; आँखोंमें अश्रु भरकर उसने कहा कि 'महाराज! अक्कूका अन्तिम समय है, उसे जीवन प्रदान कीजिये अथवा चलते समय उसे अपनी चरण-धूलिसे आशीर्वाद दीजिये; वह आपके दर्शनके लिये विकल है।' करुणा-समुद्र परम शान्तिमय बाबा गम्भीरनाथ आसनसे उठ पड़े; वे अक्कूके घर आये। शरीर ठण्डा हो रहा था, प्राण निकलनेवाले ही थे कि बाबाका दर्शन करते ही अक्कूकी चेतना लौट आयी; बाबाने उसे प्राण-दान दिया; स्वस्थ होनेपर वह बाबाकी सेवामें पुनः संलग्न हो गया। बाबा गम्भीरनाथकी महिमा अकथनीय है। जिस समय कपिलधारा-आश्रममें योगिराज गम्भीरनाथ तप कर रहे थे, उसी समय महात्मा विजयकृष्ण गोस्वामी आकाशगंगा पहाड़ीपर अपने कुछ भक्तोंके साथ साधनामें तल्लीन थे। वे बाबाकी योगशक्तिसे बहुत प्रभावित थे

सका। रायसाहब उसको साथ लेकर बाबाके पास दर्शन करने गये। अटलबिहारी गुप्त भी साथ थे। नौजवानने बाबाके चरणपर सिर रखकर प्रणाम किया। उसने तत्क्षण ही बाबासे पूछा कि 'आप कब आये? मैं बम्बईमें उतरते ही इम्पीरियल मेलमें सवार हुआ, पर आपको मैंने नहीं देखा।' उसने रायसाहबसे कहा कि 'हमारे जहाजको बम्बई पहुँचनेमें एक दिन शेष रह गया था, मेरे कैबिनके सामने बाबाजी खड़े थे। भारतीय साधुको देखकर बातचीत करनेकी उत्सुकतासे मैंने कैबिनके बाहर आकर बाबासे पाँच मिनट बात की। उसके बाद बाबा अदृश्य हो गये। न तो मैंने उनको स्टीमरमें देखा, न रेलगाड़ीमें ही उनका दर्शन हुआ।' अटलबिहारी गुप्तके समय पूछनेपर उसने कहा कि 'पिछले बुधवारके शामकी बात है।' समय ठीक वही था, जब बाबाने आधे घण्टेके लिये कोठरीका दरवाजा बन्द कर लिया था। इस घटनाका विवरण अटलबिहारी गुप्त महोदयने अपनी बँगला पुस्तक 'मृत्यु और पुनर्जन्मके बाद' में विस्तारसे दिया है। बाबा गम्भीरनाथको ऊँची-से-ऊँची यौगिक सिद्धियाँ प्राप्त थीं, पर उनके प्रदर्शनको वे योग-साधनाके क्षेत्रमें बहुत बड़ा विघ्न मानते थे। वे दूसरोंको किसी तरहका उपदेश देनेमें भी अमित संकोच करते थे।

महात्मा गम्भीरनाथ योगमानव थे। उन्होंने अनुभव कर लिया था कि 'यही मन शिव है, यही मन शक्ति और पाँच तत्त्वोंसे निर्मित जीव है। शिव, शक्ति और जीव—सब-के-सब एकाकार हैं। मायाके संयोगसे ही ब्रह्म मनके रूपमें अभिव्यक्त होता है। मनसे ही पंचभूतात्मक शरीरकी सृष्टि होती है। मनको उन्मनावस्थामें लीन करनेसे साधक सर्वज्ञ हो जाता है।' बाबा गम्भीरनाथ योगरहस्यके सर्वमान्य मर्मज्ञ थे। उन्होंने आदिनाथ—शिवद्वारा प्रवर्तित तथा गुरु गोरखनाथद्वारा प्रचारित योगकी साधना की। वे मायाके बन्धनसे पूर्ण मुक्त सिद्ध पुरुष थे। गोरखनाथजीने अपनी साधनाके सम्बन्धमें एक स्थलपर कहा है—

बाहिरि न भीतरि, नेड़ा न दूर,

खोजत रहे ब्रह्मा अरु सूर।

सेत फटिक मनि हारै बीघा,
इहि परमारथ गोरख सीधा ॥

(गोरखबानी, सबदी १७४)

परमात्मतत्त्व न बाहर है न भीतर है, न निकट है न दूर है। ब्रह्मा और सूर्य उसे खोजते ही रह गये, किंतु उसका रहस्य न पा सके। श्वेत स्फटिकमणिको हीरेने बेध लिया, ब्रह्मका साक्षात्कार कर लिया, इसी परमार्थके लिये मैं (गोरखनाथ)–ने साधना सिद्ध की।’ उनकी योग–परम्पराका अनुगमन करनेवाले योगिराज गम्भीरनाथने इसी परमार्थ—योगतत्त्वकी सिद्धिके राज्यमें आधिपत्य प्राप्त किया। उन्होंने नाथयोगके सिद्धान्तके अनुसार शिव और शक्तिकी एकात्मताका योगके माध्यमसे अनुभव किया। योगिराज बाबा गम्भीरनाथने सदा कानोंमें कुण्डल और वक्षपर नाद धारण किया। उन्होंने योगस्थ होकर दिव्य परमात्मतत्त्वका साक्षात्कार किया। वैराग्य उनकी योग–साधनाका प्राण था। वे कहा करते थे कि ‘सद्गुरु वह है, जो आत्मानुभूति प्राप्त कर लेता है और दूसरोंको आत्मनिष्ठासे सम्पन्न करता है।’ नाम–जपमें उनकी बड़ी निष्ठा थी। महात्मा विजयकृष्ण गोस्वामीकी उक्ति है कि ‘मुझे भगवन्नाम–निष्ठा बाबा गम्भीरनाथकी कृपासे प्राप्त हुई।’ वे ज्ञानी एवं हठयोगी थे। योगिराजकी श्रीमद्भगवद्गीतामें अपूर्व श्रद्धा थी। वे मायातीत, त्रिगुणातीत योगी थे। वे सत्यान्वेषक थे। वे नाम–जप, कीर्तन और भजन आदिके लिये अपने शिष्यों और भक्तोंको विशेष अवसरोंपर प्रोत्साहित किया करते थे। गीताके सम्बन्धमें उनकी उक्ति है कि ‘यह सभी युगोंके लिये सम्मान्य है। सत्यके अन्वेषकोंके लिये एक गीता ही बहुत है। यह सार्वजनिक तथा सनातन शास्त्र है।’ भगवच्छरणागतिके सम्बन्धमें उनकी उक्ति भी थी कि ‘अहंता और ममताका परित्यागकर ईश्वरके चरणोंपर समर्पित हो जाना चाहिये। वे योग–क्षेमका वहन करते ही हैं। उनसे केवल सत्य और प्रेमकी ही माँग करनी चाहिये।’ वे भगवन्नाम–साधनापर बड़ा जोर देते थे। उनकी यह घोषणा थी कि ‘भगवान्के नामसे सब कुछ हो जायगा।’ वे कहा करते थे—‘रूप बहुत हैं, स्वरूप एक ही है, सब परमात्मस्वरूप

योगिराजने गोरखपुरमें सम्वत् १९७५ वि० की चैत्र कृष्ण त्रयोदशीको सवा नौ बजे प्रातः परमधामकी यात्रा की। गोरखनाथ-मन्दिरके सन्निकट ही उनका समाधि-मन्दिर है, जो शाश्वत सत्य और चिरन्तन शान्तिका दिव्य प्रतीक है। उसमें उनकी प्रतिमा प्रतिष्ठित है। नित्य नियमपूर्वक प्रतिमाकी पूजा-आरती होती है। शिष्योंको कभी-कभी स्वप्नमें दर्शन देकर वे उनका पथ-प्रदर्शन करते रहते हैं। योगिराज बाबा गम्भीरनाथ योग, ज्ञान, तपस्या और भक्तिके सजीव प्रतीक थे।

Hinduism Discord Server <https://dsc.gg/dharma> | MADE WITH LOVE BY Avinash/Sh

भारतमें गायका महत्त्व

(श्रीरामलालजी गुप्त)

हम अपने पूर्वजोंसे यह बात सुनते चले आ रहे हैं कि 'पृथ्वी बैलकी सींगके सहारे खड़ी है।' बचपनमें हम इसे केवल बच्चोंकी गण्य-सी ही समझा करते थे। पर इसके अन्दर जो गूढ़ रहस्य छिपा है, उसको हम उस समय समझनेमें सर्वथा असमर्थ थे, परंतु आज इस वाक्यपर हम जितना अधिक विचार करते हैं, उतना ही अधिक इसे ठीक और रहस्यपूर्ण पाते हैं। हमारी इस पृथ्वीपर रहनेवाले सभी जीवधारियोंका जीवन पृथ्वीकी उपजपर ही निर्भर है और उपज, यदि ध्यानसे देखा जाय, तो बैलके ही अस्तित्वपर आश्रित है।

जिन गौओंके अमृतोपम दूधके आधारपर मानव-समाज जीवित रहा है, जिन बैलोंके कारण हमारे खेतोंको बढ़िया खाद मिलती आयी है, जिनके कारण खाद्य पदार्थ पैदा होते हैं, जो बैल भार-वहन करनेमें सबसे उत्तम साधन हैं और जो कच्चे-पक्के, ऊँचे-नीचे रेतीले और कीचड़ आदिवाले सभी स्थानोंपर काम देते हैं, वे सचमुच ही समस्त पृथ्वीको अपने ऊपर धारण कर रहे हैं।

प्राचीन भारतके ऋषि-महर्षि और राजा-महाराजा गाय और इसकी संतानसे होनेवाले लाभोंको भलीभाँति समझते थे। इसीलिये वे गायकी पूजा और आदर-प्रतिष्ठा माताके समान किया करते थे। गायकी रक्षाके लिये हमारे पूर्वज अपने प्राणोंपर खेल जाना भी एक साधारण-सी बात समझा करते थे। वेदोंमें भी गायको अनेक स्थानोंपर अघ्न्या (अवध्य) कहा है। देशकी आर्थिक अवस्थाका आधार भी गाय-बैलको ही माना जाता था। मुसलमान बादशाहोंके राज्यकालमें गोहत्यापर पूर्ण रोक थी। गोहत्या करनेवालेको हाथ काटनेतकका भी दण्ड दिया जाता था। अंग्रेजोंने देशके लोगोंको निर्बल और निकम्मा करनेके लिये दूध-घीको समाप्त करने और परस्पर वैमनस्य फैलानेके लिये ही गो-वधको बढ़ावा दिया था।

गायके दूध-दहीके लाभ—गौकी इतनी महत्ता इससे होनेवाले लाभोंको दृष्टिमें रखते हुए दी गयी है। इसका दूध अमृतके समान माना गया है। इसके दूधमें वे सभी पदार्थ विद्यमान हैं, जो एक मानवके बच्चेके पालन-पोषणके लिये आवश्यक हैं। गौका दूध अनाज भी है और ओषधि भी। आजके विज्ञानने परीक्षणोंसे यह सिद्ध कर दिया है कि गायके दूधमें मानवके अनेक रोगों—जैसे गलेके रोग, चेचक, क्षय-रोग, हृदयके रोग और पाण्डुरोग आदिको दूर करनेकी शक्ति है। गायके दूधका दही जिगर और आमाशयके रोगोंके लिये बहुत ही लाभदायक है।

महात्मा गाँधी अपनी पुस्तकमें डॉक्टर सान्तराका (जो कि कोढ़की बीमारियोंके विशेषज्ञ थे) उद्धरण देकर लिखते हैं कि 'गायके दूधका प्रयोग कोढ़-जैसे रोगोंमें बहुत लाभदायक रहता है।' इसी पुस्तकमें एक-दूसरे स्थानपर आप लिखते हैं कि 'गायका दूध बच्चों और बौद्धिक कार्य करनेवालोंके लिये बहुत अधिक उपयोगी होता है। गौके दूधका सेवन करनेसे शारीरिक पोषणके साथ ही स्फूर्ति, सात्विकता, वीर्य और बौद्धिक शक्तियोंका विकास भी खूब होता है। इसका घी आयुको बढ़ानेवाला है।'

गोबर और मूत्र कीटाणुनाशक—गायके न केवल दूध और दही ही दवाइयोंका काम देते हैं, अपितु इसका मूत्र और गोबर भी बीमारियोंकी रोक-थाममें सहायक सिद्ध होते हैं। जर्मनके एक विद्वान् डॉक्टर सीमंजका कहना है कि गौके मूत्र और गोबरका लेपन करनेसे घरमें मच्छर और रोगोंके दूसरे कीटाणु बढ़ने नहीं पाते।

दूधसे अनाजकी कमीकी पूर्ति—भोजनमें दूध-दहीके अभावके कारण ही हमें अधिक अनाज खाना पड़ता है। यदि हमें दूध-दही पर्याप्तमात्रामें मिलें, तो अनाजकी लागत अपने-आप ही कम हो जायगी। तब

गोबरकी खाद बनाम बनावटी खाद—गायाँ-बैलोंके गोबर और मूत्रसे जो खाद स्वयमेव तैयार होती रहती है, वह भूमिकी उपजाऊ शक्तिको बहुत अधिक बढ़ा देती है, जिससे उपजमें पर्याप्त वृद्धि तो होती ही है, साथ ही अनाजकी पोषक-शक्ति भी बढ़ती है। जबकि बनावटी खाद भूमिको खोखला कर देती है और

साधनोपयोगी पत्र

(१)

ब्रह्मज्ञान, पराभक्ति, भगवान्की लीला

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण! आपका कृपापत्र मिला था। उत्तर लिखनेमें बहुत देर हो गयी, इसके लिये क्षमा करें। व्यतिरेक और अन्वय—दोनों प्रकारसे ही ब्रह्मज्ञानकी साधना होती है। आजकल अवश्य ही ऐसी प्रथा—सी हो गयी है कि लोग वेदान्तका अर्थ ही व्यतिरेक—साधना करते हैं। वे ‘नेति—नेति’ कहकर जगत्को स्वप्न, गन्धर्वनगर, शशशृंग और रज्जुमें सर्प आदिकी भाँति सर्वथा असत् बतलाकर सबका अस्वीकार तो करते हैं, परंतु सब कुछको एकमात्र नित्य सच्चिदानन्दधन—स्वरूप मानकर ब्रह्मका स्वीकार नहीं करते। इसलिये कभी—कभी जगत्का बाध करते—करते ब्रह्मका भी बाध हो जाता है और मनुष्यका चित्त एक जड़ शून्य भूमिकापर जा पहुँचता है, जगत् वस्तुतः न कभी था, न होगा—यह सत्य है, इसके साथ यह भी सर्वथा सत्य है कि जगत्के रूपमें जो कुछ भी भास रहा है, वह तथा जिसको भासता है, वह भी ब्रह्म ही है। जगत्को सर्वथा वस्तुशून्य समझना ‘व्यतिरेक’ साधना है और चेतनाचेतनात्मक समस्त विश्वमें एक चेतन अखण्ड परिपूर्ण ब्रह्मसत्ताका अनुभव करना ‘अन्वय’ साधना। दोनों साधनाओंके समन्वयसे जो ‘सर्वं खल्विदं ब्रह्म नेह नानास्ति किञ्चन’ तत्त्वकी प्रत्यक्षानुभूति होती है, वही ब्राह्मी स्थिति है।

यह श्रीभगवान्का सच्चिदानन्दमय ब्रह्मस्वरूप है। इसके जान लेनेपर ही समग्र पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण—की प्रेमलीला या व्रजलीलाके समझनेका अधिकार प्राप्त होता है। दिव्य हृदय और दिव्य नेत्रोंके बिना व्रजलीलाके दर्शन नहीं हो सकते। विविध साधनाओंके द्वारा हृदय जब समस्त संस्कारोंसे शून्य होकर शुद्ध सत्त्वमें प्रतिष्ठित हो जाता है और जब सम्पूर्ण विश्वमें एक अखण्ड

साक्षात् अनुभूति होती है, तभी प्रेमकी आँखें खुलती हैं तभी भगवान्की लीलाके यथार्थ और पूर्ण दर्शनकी योग्यता प्राप्त होती है और तभी प्रेमी भक्तका भगवान्के साथ पूर्णव्ययमय मिलन होता है। यही ज्ञानकी परा निष्ठा है। ‘निष्ठा ज्ञानस्य या परा।’ श्रीभगवान्ने स्वयं कहा है—

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न कांक्षति।

समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः।

ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्॥

‘साधक जब प्रसन्न—अन्तःकरण होकर ब्रह्ममें स्थित हो जाता है, जब उसे न तो किसी बातका शोक होता है और न किसी बातकी आकांक्षा ही। समस्त प्राणियोंमें उसका समभाव हो जाता है, तब उसे मेरी पराभक्ति—पूर्ण प्रेम प्राप्त होता है। और उस पराभक्तिके द्वारा मुझ भगवान्के तत्त्वको मैं जो कुछ और जितना कुछ हूँ—वह पूरा—पूरा जान लेता है और इस प्रकार तत्त्वसे जानकर वह तुरंत ही मुझमें मिल जाता है।’

यह ब्रह्मज्ञान और यह पराभक्ति—केवल ऊँची—ऊँची बातोंसे नहीं मिलती। निरी बातोंसे तो ब्रह्मज्ञानके नामपर मिथ्या अभिमान और भक्तिके नामपर विषय—विमोहकी प्राप्ति ही होती है। सत्संग, साधुसेवन, सद्भिचार, वैराग्य, भजन, निष्काम कर्म, यम—नियमादिका पालन और तीव्रतम अभिलाषा होनेपर ही इनकी प्राप्ति सम्भव है। भगवत्कृपाकी तो शरीरमें प्राणोंकी भाँति सभी साधनाओंमें अनिवार्य आवश्यकता है। शेष प्रभुकृपा।

(२)

कर्म—रहस्य

प्रिय महोदय! सप्रेम हरिस्मरण। कर्मके सम्बन्धमें बात यह है कि कर्म तीन प्रकारके हैं—संचित, प्रारब्ध और क्रियमाण। मनुष्य प्रतिक्षण सकामभावसे जो कुछ करता है, वह क्रियमाण है। मनुष्य

हुआ प्रत्येक कर्म कर्मसंग्रहमें संगृहीत होता रहता है, जो समयपर कर्मफलदायिनी भागवती शक्तिके द्वारा 'प्रारब्ध' बनाया जाकर यथायोग्य शुभाशुभ फल प्रदान करता है। यह जमा होनेवाला कर्म संचित है। इस क्षणके पूर्वतकके हमारे सारे कर्म इस कर्मकी गोदाममें जा चुके हैं। इस कर्मराशिमें—से जितने कर्म अलग करके एक जन्मके लिये फलरूपसे नियत कर दिये जाते हैं, वही 'प्रारब्ध' है। इसीके अनुसार जाति, आयु, भोग इत्यादि प्राप्त होते हैं। प्रारब्धका यह फल साधारणतया सभीको बाध्य होकर भोगना पड़ता है। कोई भी सहजमें इस प्रारब्धफलभोगसे अपनेको बचा नहीं सकता— 'अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभम्' इस प्रकार भागवती-शक्तिके नियन्त्रणमें प्रारब्धके अनुसार मनुष्यको कर्मफल भोगना ही पड़ता है। परन्तु यह नियम नहीं है कि पूर्वजन्मोंमें किये गये कर्मोंके संचितसे ही प्रारब्ध बने। प्रबल कर्म होनेपर वह इसी जन्ममें संचितसे तुरंत प्रारब्ध बनकर अपना शुभाशुभ फल—फलदानोन्मुख प्रारब्धके बीचमें ही भुगता देते हैं। इसके भी नियम हैं। मतलब यह कि प्रारब्धके अनुसार जो फल नहीं होना है, वह उस प्रारब्धके अनुसार तो होगा ही नहीं—यह सत्य है—परन्तु 'वह होगा ही नहीं' यह निश्चित नहीं है। नवीन कर्म करनेमें मनुष्य स्वतन्त्र है, वह कोई ऐसा प्रबल कर्म भी कर सकता है—जो हाथों-हाथ प्रारब्ध बनकर उसे तुरंत फल प्रदान कर दे। जैसे किसीके पूर्वकर्मजनित प्रारब्धके अनुसार 'पुत्र होनेका विधान नहीं है'—परन्तु वह शास्त्रीय 'पुत्रेष्टि यज्ञ' विधि तथा श्रद्धापूर्वक कर ले तो उसको पुत्र हो सकता है। इसी प्रकारके प्रबल कर्मोंद्वारा धन, मान, आरोग्य, आयु आदि पदार्थोंकी प्राप्ति भी हो सकती है। ठीक ऐसे ही प्रबल अशुभ कर्मोंके द्वारा इसी जन्ममें अशुभ फल भी (पूर्वकर्मजनित प्रारब्धमें न होनेपर भी) मिल सकते हैं। इससे पूर्वकृत कर्मोंके द्वारा बने हुए प्रारब्धका नाश नहीं

हो जाता। उसके बीचमें ही नया फल मिल जाता है और उस फलकी अवधि समाप्त होते ही पुनः वही प्रारब्ध लागू हो जाता है।

जैसे कर्म अपना फल अवश्य देता है, यह कर्मका अटल नियम है। वैसे ही यह भी नियम है कि 'सम्यक् ज्ञान' अथवा 'भगवान्‌में पूर्ण समर्पण' से सारी कर्मराशि भस्म भी हो जाती है। 'संचित'—अनन्त जन्मोंके संगृहीत कर्म जल जाते हैं। उनमें 'प्रारब्ध' उत्पन्न करनेकी शक्ति नहीं रह जाती। नवीन 'क्रियमाण' कर्म कर्तृत्वके अभावसे 'संचित' नहीं बन सकते। भूँजे हुए बीजोंसे जैसे अंकुर नहीं उत्पन्न होते, वैसे ही वे संचितका उत्पादन नहीं कर सकते। रहा 'प्रारब्ध' का भोग—सो वह भी भोक्तापनका अभाव और ब्रह्मानन्द-स्वरूप हो जानेसे अथवा भगवान्‌के प्रत्येक मंगलमय विधानमें एकरस आनन्दका नित्य अनुभव होते रहनेसे सुख-दुःख उपजानेवाला नहीं होकर खेलमात्र होता है। इस प्रकार तीनों ही कर्म नष्ट हो जाते हैं। यही कर्मविज्ञानका शास्त्रीय नियम है और यह सर्वथा सत्य है। कर्मकी भूमिकामें इसे असत्य बतलानेका साहस करना दुःसाहसमात्र है।

भगवान्की दृष्टिसे बात दूसरी ही है। वहाँ भूत, भविष्य और वर्तमानका भेद नहीं है। उनके लिये सभी वर्तमान है। और जो कुछ भी होता है, सब पहलेसे रचा हुआ ही होता है। यह उनकी नित्यलीला है।

जगत्की छोटी-बड़ी सभी घटनाएँ उनकी इस नित्य-लीलाका ही अंग हैं। वहाँ कुछ भी नया नहीं बनता, केवल नया—नित्य नया—नया दीखता है। रचा हुआ तो है पहलेसे ही। जैसे सिनेमाके फिल्ममें सारे दृश्य पहलेसे अंकित हैं, हमारे सामने एक-एक आते हैं, वैसे ही अनन्त ब्रह्माण्डोंके अनन्त अतीत, वर्तमान और भविष्य सभी इस विराट् फिल्ममें अंकित हैं। क्षुद्र-से-क्षुद्र जीवका नगण्य संकल्प भी इस फिल्मका ही दृश्य है। शेष प्रभुकृपा।

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१७, सूर्य उत्तरायण-दक्षिणायन, ग्रीष्म-वर्षाऋतु, श्रावण कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा दिनमें १०।२१ बजेतक	सोम	उ० षा० सायं ६।५८ बजेतक	१० जुलाई	श्रावण सोमवारव्रत ।
द्वितीया " ११।२५ बजेतक	मंगल	श्रवण रात्रिमें ८।३२ बजेतक	११ "	भद्रा रात्रिमें ११।४४ बजेसे ।
तृतीया " १२।२ बजेतक	बुध	धनिष्ठा " ९।३८ बजेतक	१२ "	भद्रा दिनमें १२।२ बजेतक, कुम्भराशि दिनमें ९।५ बजेसे, पंचकारम्भ दिनमें ९।५ बजे, संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय रात्रिमें ९।७ बजे ।
चतुर्थी " १२।६ बजेतक	गुरु	शतभिषा " १०।१२ बजेतक	१३ "	x x x
पंचमी " ११।४० बजेतक	शुक्र	पू० भा " १०।१७ बजेतक	१४ "	मीनराशि दिनमें ४।१६ बजेसे ।
षष्ठी " १०।४६ बजेतक	शनि	उ० भा० " ९।५५ बजेतक	१५ "	भद्रा दिनमें १०।४६ बजेसे रात्रिमें १०।५ बजेतक, मूल रात्रिमें ९।५५ बजेसे ।
सप्तमी " ९।२५ बजेतक	रवि	रेवती " ९।११ बजेतक	१६ "	मेषराशि रात्रिमें ९।११ बजेसे, पंचक समाप्त रात्रिमें ९।११ बजे, कर्क-संक्रान्ति रात्रिमें ३।१७ बजे, दक्षिणायन एवं वर्षा-ऋतु प्रारम्भ ।
अष्टमी " ७।४३ बजेतक	सोम	अश्विनी " ८।५ बजेतक	१७ "	श्रावण सोमवारव्रत, मूल रात्रिमें ८।५ बजेतक ।
नवमी प्रातः ५।४२ बजेतक	मंगल	भरणी सायं ६।४४ बजेतक	१८ "	भद्रा दिनमें ४।३४ बजेसे रात्रिमें ३।२७ बजेतक, वृषराशि रात्रिमें १२।२० बजेसे ।
दशमी रात्रिमें ३।२७ बजेतक				
एकादशी " १।३ बजेतक	बुध	कृत्तिका " ५।११ बजेतक	१९ "	कामदा एकादशीव्रत (स्मार्त) ।
द्वादशी " १०।३५ बजेतक	गुरु	रोहिणी दिनमें ३।३४ बजेतक	२० "	मिथुनराशि रात्रिमें २।४३ बजेसे, एकादशीव्रत (वैष्णव), पुष्य नक्षत्रका सूर्य दिनमें ३।३५ बजे ।
त्रयोदशी " ८।६ बजेतक	शुक्र	मृगशिरा " १।५३ बजेतक	२१ "	भद्रा रात्रिमें ८।६ बजेसे, प्रदोषव्रत ।
चतुर्दशी सायं ५।४४ बजेतक	शनि	आर्द्रा " १२।१६ बजेतक	२२ "	भद्रा प्रातः ६।५६ बजेतक, कर्कराशि रात्रिशेष ५।१० बजेसे ।
अमावस्या दिनमें ३।३० बजेतक	रवि	पुनर्वसु " १०।४९ बजेतक	२३ "	अमावस्या ।

सं० २०७४, शक १९३९, सन् २०१७, सूर्य दक्षिणायन, वर्षा-ऋतु, श्रावण शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वदि
प्रतिपदा दिनमें १।२९ बजेतक	सोम	पुष्य दिनमें ९।३४ बजेतक	२४ जुलाई	मूल दिनमें ९।३४ बजेसे, श्रावण सोमवारव्रत।
द्वितीया " ११।५० बजेतक	मंगल	आश्लेषा " ८।३९ बजेतक	२५ "	सिंहराशि दिनमें ८।३९ बजेसे, धर्मसम्राट स्वामी करपात्री-जयन्ती।
तृतीया " १०।३१ बजेतक	बुध	मघा " ८।३ बजेतक	२६ "	भद्रा रात्रिमें १०।५ बजेसे, वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल दिनमें ८।३ बजेतक।
चतुर्थी " ९।३९ बजेतक	गुरु	पू० फा० " ७।५३ बजेतक	२७ "	भद्रा दिनमें ९।३९ बजेतक, कन्याराशि दिनमें १।५७ बजेसे।
पंचमी " ९।१५ बजेतक	शुक्र	उ० फा० " ८।११ बजेतक	२८ "	नागपंचमी।
षष्ठी " ९।२३ बजेतक	शनि	हस्त " ९।० बजेतक	२९ "	तुलाराशि रात्रिमें ९।३९ बजेसे।
सप्तमी " १०।३ बजेतक	रवि	चित्रा " १०।१९ बजेतक	३० "	भद्रा दिनमें १०।३ बजेसे रात्रिमें १०।३५ बजेतक, गोस्वामी श्रीतुलसीदास-जयन्ती।
अष्टमी " ११।८ बजेतक	सोम	स्वाती " १२।६ बजेतक	३१ "	श्रावण सोमवारव्रत।
नवमी " १२।४१ बजेतक	मंगल	विशाखा " २।१६ बजेतक	१ अगस्त	वृश्चिकराशि प्रातः ७।४४ बजेसे।
दशमी " २।३५ बजेतक	बुध	अनुराधा " ४।४४ बजेतक	२ "	भद्रा रात्रिमें ३।३१ बजेसे, मूल दिनमें ४।४४ बजेसे।
एकादशी " ४।३२ बजेतक	गुरु	ज्येष्ठा रात्रिमें ७।२० बजेतक	३ "	भद्रा दिनमें ४।३२ बजेतक, पुत्रदा एकादशीव्रत (सबका), आश्लेषाका सूर्य दिनमें ३।५६ बजे, धनुराशि रात्रिमें ७।२० बजेसे।
द्वादशी सायं ६।३३ बजेतक	शुक्र	मूल " ९।५६ बजेतक	४ "	मूल रात्रिमें ९।५६ बजेतक।
त्रयोदशी रात्रिमें ८।३३ बजेतक	शनि	पू० षा० " १२।२० बजेतक	५ "	शनिप्रदोषव्रत।
चतुर्दशी रात्रिमें ९।५६ बजे	रवि	उ० षा० " २।२६ बजेतक	६ "	भद्रा रात्रिमें ९।५६ बजेसे, मकरराशि प्रातः ६।५२ बजेसे।
पूर्णिमा " ११।२ बजेतक	सोम	श्रवण रात्रिशेष ४।६ बजेतक	७ "	भद्रा दिनमें १०।३० बजेतक, पूर्णिमा, रक्षाबन्धन भद्राके बाद १०।३० बजेसे, खण्ड चन्द्रग्रहण प्रारम्भ रात्रिमें १०।५३ बजे एवं मोक्ष रात्रिमें १२।४८ बजे, श्रावण सोमवारव्रत।

—कैलाश पंकज श्रीवास्तव

पढ़ो, समझो और करो

(१)

सच्ची तीर्थयात्रा

सन् १८६८ ई०की बात है। श्रीरामकृष्ण परमहंस तीर्थयात्रापर निकले थे। उनके साथ दक्षिणेश्वरके काली-मन्दिरके प्रबन्धक मथुर बाबू और परिवारके कुछ लोग थे। अपने यात्रा-क्रममें एक बार पूरी टोली देवघरमें ठहरी। उन दिनों वह पूरा नगर तथा आस-पासके गाँव भयंकर अकालकी चपेटमें थे। वहाँके स्थानीय आदिवासी संथाल लोग कई दिनोंसे भूखे थे। उनमेंसे कुछ लोग भोजनके अभावमें परलोक सिधार चुके थे। दुर्बलताके कारण उन लोगोंके शरीर अस्थिपंजर-जैसे दीखते थे। उनके पास तन ढकनेके लिये पर्याप्त कपड़े भी नहीं थे। श्रीरामकृष्ण इस दृश्यको सहन नहीं कर सके। वे भी उन संथालोंके बीच बैठकर जोरोंसे रोने लगे। उन्होंने मथुर बाबूसे उनके कष्टोंको दूर करनेको कहा। मथुर बाबू बोले—‘यहाँ तो बहुत सारे गरीब लोग हैं। मैं इन सब लोगोंकी सहायता कैसे कर सकता हूँ? फिर हमें काशी, प्रयाग, हरिद्वार आदि तीर्थोंका खर्च भी निबटाना होगा।’ श्रीरामकृष्णने कहा—‘इन अकाल-पीड़ितोंको इस हालमें छोड़कर मैं तीर्थयात्रापर नहीं जाना चाहता। ये जगदम्बाकी सन्तान हैं। मैं भी इनके साथ आमरण उपवास करूँगा। तुम्हारी तीर्थयात्राकी मैं बिलकुल ही परवाह नहीं करता।’

हार मानकर मथुर बाबूको उन संथाल आदिवासियोंको खिलाने और वस्त्र देनेमें काफी धन खर्च करना पड़ा और तभी श्रीरामकृष्ण आगेकी यात्रा जारी रखनेको सहमत हुए।—उमेश प्रसाद सिंह

(२)

अच्छी आदतोंसे बच्चोंको रखें स्वस्थ

स्वस्थ रहनेके नियमोंका पालन अगर बच्चेको बचपनमें ही करवाना शुरू कर दिया जाय तो उसके जिन्दगीभर नीरोग रहनेकी सम्भावना बनी रह सकती है। छोटी-मोटी बीमारियाँ न हो सकें, खाने-पाने

एवं रहन-सहनके नियम बचपनमें ही आदतोंका रूप ले लें तो भविष्यमें औषधियोंकी आवश्यकता नहीं रहेगी।

प्रातःकाल सूर्योदयसे पूर्व उठना और रात्रिको जल्दी सो जाना स्वास्थ्यके लिये हितकर होता है। प्रातः उठकर जलका सेवन शरीरको तन्दुरुस्त रखता है। वहीं रातको उसका प्रयोग उसको रोगी बनाता है। प्रायः बच्चे स्कूल जानेकी जल्दीमें मलत्याग ठीकसे नहीं कर पाते। मल-प्रवृत्तिको रोकनेसे पिण्डलियोंमें ऐंठन एवं दृष्टिदोष-जैसे विकार उत्पन्न होते हैं। छोटे बच्चोंमें चश्मा लगानेके विभिन्न कारणोंमेंसे एक कारण यह भी है। जहाँतक हो सके बच्चोंको तेलमें पका अन्न न दें। दूधमें पका अन्न आँखोंके लिये विशेष रूपसे हितकर है। दूधमें फल डालकर उसका शेक बनाकर पीनेकी परम्पराको लोग एक अच्छी परम्परा समझते हैं, लेकिन आयुर्वेदमें आम, केला, बेर, नारियल आदि फलोंका दूधके साथ प्रयोग विभिन्न रोगोंका कारण बताया गया है। फास्ट फूडका बहुलतासे प्रयोग इनको बनानेवाली कम्पनियोंको चाहे लाभान्वित करता हो, पर बच्चोंमें इनके माध्यमसे अनेक रसायनिक द्रव्य उनके शरीरको हानि पहुँचाते हैं। आहारका सम्बन्ध मनके साथ भी होता है। घर-परिवारको खुशहाल बनानेके लिये बच्चोंको ईमानदारीकी कमाईका ही खाना खिलाना चाहिये। आमला, अनार एवं सैन्धव लवणको छोड़कर बच्चोंको खट्टी एवं नमकीन वस्तुओंका प्रयोग कम मात्रामें करवायें। चायकी आदत न डलवाकर दूधका प्रयोग नियमित रूपसे करवाना चाहिये। दहीका प्रयोग स्वास्थ्यके लिये हितकर होता है, पर शरद् एवं बसन्त ऋतुओंमें इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। किसी भी ऋतुमें रातको दही न खायें। बहुत-से लोग बच्चोंको शहद खानेके लिये देते हैं। ध्यान रहे कि शहदको अधिक मात्रामें न दें और गर्म वस्तुओंके साथ न ले। बहुत-से बच्चे कशमकश नामक रोग

—अनूपकुमार गक्खड़

(३)

आयुर्वेदिक अनुभूत प्रयोग

(१) अग्निदग्ध

१-आगसे या किसी गरम पदार्थ (घी, तेल, पानी आदि) से जल जानेपर प्राथमिक उपचारके रूपमें घृतकुमारी (ग्वारपाठे)-का रस थोड़ी-थोड़ी देरमें बार-बार (आठ-दस बार) लगानेसे शीघ्र राहत मिलती है। जलन शान्त होती है एवं फफोले नहीं होते। यदि कभी घाव भी हो जाय तो ग्वारपाठेका गूदा लगानेसे दो-चार दिनमें ठीक हो जायगा।

२-तुलसीके पत्तों का रस नारियल के तेल में मिलाकर लगानेसे लाभ होता है। छाले नहीं होते।

(२) बच्चों का पीलिया

बच्चोंका पीलिया लीवरकी खराबीसे होता है। उसके लिये—आँवलेका रस एवं शहद समान मात्रामें मिलायें एवं बच्चेकी उम्रके अनुसार एक चम्मचसे दो चम्मच दिनमें तीन बार या दो बार एक सप्ताह तक दें, इससे बच्चोंके पीलिया रोगमें लाभ होता है, पीलिया मिट जाता है तथा लीवर पुष्ट होता है। यह प्रयोग बड़ोंके लिये भी उपयोगी है।

(३) बच्चेका नींदमें बिस्तरपर पेशाब करना

१-यदि कोई बच्चा बड़ी उम्रमें भी बिस्तरपर

रातमें पेशाब करता है तो परिवारके लोगोंको बड़ी शर्म आती है। दो सप्ताह तक रातमें सोनेसे पहले नित्य ५० ग्राम मूँगफलीके दाने ठीकसे रोज ताजा सेंककर छिलके निकालकर खिला दें, पानी नहीं पिलायें। पूर्ण लाभ होगा।

२-रोगीको रोज आधी सिँकी आधी कच्ची तिल्ली मिलाकर ५० ग्राम खिलानेसे भी बच्चा बिस्तरपर पेशाब करना बन्द कर देता है।

३-होम्योपैथीमें बेलाडोना ३० या कल्केरिया कार्ब ३० की ४-५ गोली दिनमें तीन बार, चार-छः दिन देनेसे अच्छा लाभ होता है।

४-रातमें नींदमें बच्चे बिछौनेपर पेशाब कर देते हैं, उनको रातमें सोते समय दूधके साथ शंखपुष्पी चूर्ण ३ माशा देनेसे अच्छा लाभ होता है।

(४) बच्चोंके पेटमें कृमि

छोटे बच्चोंके पेटमें कृमि हो जाते हैं। तब बच्चा रातमें नींदमें दाँत पीसता है या दाँत रगड़ता है। उसके मुँहसे दुर्गन्ध आने लगती है शरीर दुबला हो जाता है, चिड़चिड़ा हो जाता है। कभी-कभी कृमिके कारण शरीरपर पित्ती भी उछलने लगती है। इसके लिये—

१-छोटे बच्चोंके लिये होम्योपैथीमें चायना-३० की ३-४ गोली दिनमें ३ बार देनेसे तत्काल लाभ होता है।

(५) नेत्रज्योतिवर्धक योग

१-त्रिफला चूर्णको शहदके साथ मिलाकर दिनमें दो बार लेनेसे नेत्रज्योति बढ़ती है।

२-शुद्ध शहदको भी नेत्रोंमें लगानेसे अच्छा लाभ होता है।

(६) बुद्धिवर्द्धक चूर्ण

कुछ बच्चे मंदबुद्धि होते हैं, वे पढ़ते हैं, पर उन्हें याद नहीं रहता, जल्दी ही भूल जाते हैं। ऐसे बच्चोंके लिये निम्न चूर्ण बड़ा उपयोगी है—

१-शंखपुष्पी, ब्राह्मी एवं बच शुद्ध रूपमें समान भागमें लेकर कपड़छन चूर्ण बना ले, उसमें चूर्णके

जिस बीमारीका कोई इलाज नहीं था, अमेरिका-
तकके डॉक्टरोंने ऐसा कह दिया था कि मेरे जीवनके
कुछ महीने ही शेष हैं, उस तकलीफको मेरे लालाजी
(प्रभु)-के श्रीचरणकमलोंसे निकली गंगाजीके जलने
ठीक कर दिया।—बालकिशन सोनी

मनन करने योग्य

सच्ची कृपा

एक बार एक निर्धन ब्राह्मणके मनमें धन पानेकी तीव्र कामना हुई। वह सकाम यज्ञोंकी विधि जानता था; किंतु धन ही नहीं तो यज्ञ कैसे हो? वह धनकी प्राप्तिके लिये देवताओंकी पूजा और व्रत करने लगा। कुछ समय एक देवताकी पूजा करता; परंतु उससे कुछ लाभ नहीं दिखायी पड़ता तो दूसरे देवताकी पूजा करने लगता और पहलेको छोड़ देता। इस प्रकार उसे बहुत दिन बीत गये। अन्तमें उसने सोचा—‘जिस देवताकी आराधना मनुष्यने कभी न की हो, मैं अब उसीकी उपासना करूँगा। वह देवता अवश्य मुझपर शीघ्र प्रसन्न होगा।’

ब्राह्मण यह सोच ही रहा था कि उसे आकाशमें कुण्डधार नामक मेघके देवताका प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। ब्राह्मणने समझ लिया कि ‘मनुष्यने कभी इनकी पूजा न की होगी। ये बृहदाकार मेघदेवता देवलोकके समीप रहते हैं, अवश्य ये मुझे धन देंगे।’ बस, बड़ी श्रद्धा-भक्तिसे ब्राह्मणने उस कुण्डधार मेघकी पूजा प्रारम्भ कर दी।

ब्राह्मणकी पूजासे प्रसन्न होकर कुण्डधारने देवताओंकी स्तुति की; क्योंकि वह स्वयं तो जलके अतिरिक्त किसीको कुछ दे नहीं सकता था। देवताओंकी प्रेरणासे यक्षश्रेष्ठ मणिभद्र उसके पास आकर बोले—‘कुण्डधार! तुम क्या चाहते हो?’

कुण्डधार—‘यक्षराज! देवता यदि मुझपर प्रसन्न हैं तो मेरे उपासक इस ब्राह्मणको वे सुखी करें।’

मणिभद्र—‘तुम्हारा भक्त यह ब्राह्मण यदि धन चाहता हो तो इसकी इच्छा पूर्ण कर दो। यह जितना धन माँगेगा, वह मैं इसे दे दूँगा।’

कुण्डधार—‘यक्षराज! मैं इस ब्राह्मणके लिये धनकी प्रार्थना नहीं करता। मैं चाहता हूँ कि देवताओंकी कृपासे यह धर्मपरायण हो जाय। इसकी बुद्धि धर्ममें लगे।’

मणिभद्र—‘अच्छी बात! अब ब्राह्मणकी बुद्धि धर्ममें

ही स्थित रहेगी।’ उसी समय ब्राह्मणने स्वप्नमें देखा कि उसके चारों ओर कफन पड़ा हुआ है। यह देखकर उसके हृदयमें वैराग्य उत्पन्न हुआ। वह सोचने लगा—‘मैंने इतने देवताओंकी और अन्तमें कुण्डधार मेघकी भी धनके लिष्ट्ये आराधना की, किंतु इनमें कोई उदार नहीं दीखता। इस प्रकार धनकी आशमें ही लगे हुए जीवन व्यतीत करनेसे क्या लाभ! अब मुझे परलोककी चिन्ता करनी चाहिये।’

ब्राह्मण वहाँसे वनमें चला गया। उसने अब तपस्या करना प्रारम्भ किया। दीर्घकालतक कठोर तपस्या करनेके कारण उसे अद्भुत सिद्धि प्राप्त हुई। वह स्वयं आश्चर्य करने लगा—‘कहाँ तो मैं धनके लिये देवताओंकी पूजा करता था और उसका कोई परिणाम नहीं होता था और कहाँ अब मैं स्वयं ऐसा हो गया कि किसीको धनी होनेका आशीर्वाद दे दूँ तो वह निःसंदेह धनी हो जायगा!’

ब्राह्मणका उत्साह बढ़ गया। तपस्यामें ही उसकी श्रद्धा बढ़ गयी। वह तत्परतापूर्वक तपस्यामें ही लगा रहा। एक दिन उसके पास वही कुण्डधार मेघ आया। उसने कहा—‘ब्रह्मन्! तपस्याके प्रभावसे आपको दिव्यदृष्टि प्राप्त हो गयी है। अब आप धनी पुरुषों तथा राजाओंकी गति देख सकते हैं।’ ब्राह्मणने देखा कि धनके कारण गर्वमें आकर लोग नाना प्रकारके पाप करते हैं और घोर नरकोंमें गिरते हैं।

कुण्डधार बोला—‘भक्तिपूर्वक मेरी पूजा करके आप यदि धन पाते और अन्तमें नरककी यातना भोगते तो मुझसे आपको क्या लाभ होता? जीवका लाभ तो कामनाओंका त्याग करके धर्माचरण करनेमें ही है। उनपर सच्ची कृपा तो उन्हें धर्ममें लगाना ही है। उन्हें धर्ममें लगानेवाला ही उनका सच्चा हितैषी है।’

ब्राह्मणने मेघके प्रति कृतज्ञता प्रकट की और कामनाओंका त्याग करके अन्तमें मुक्त हो गया।

कल्याणका आगामी ९२वें वर्ष (सन् २०१८ ई०)-का विशेषाङ्क

‘ श्रीशिवमहापुराणाङ्क ’

(उत्तरार्ध)

[श्लोकाङ्कसहित हिन्दीभाषानुवाद]

भारतीय सनातन संस्कृतिको यथार्थ रूपमें अभिव्यक्त करनेका श्रेय पुराण-वाङ्मयको ही है। वेदोंमें जो विषय सूत्ररूपमें आये हैं, पुराणोंमें उन्हें आख्यान-शैलीके माध्यमसे व्यक्त किया गया है। पुराणोंमें श्रीशिवमहापुराणका महनीय स्थान है। वेद-वेदान्तमें विलसित परम तत्त्व—‘परमात्मा’ का इसमें ‘शिव’ नामसे गान किया गया है। गीताप्रेससे पुराणोंके प्रकाशन-क्रममें कई पुराण ‘कल्याण’ के विशेषाङ्कोंके रूपमें पूर्वमें प्रकाशित हुए हैं। इसी क्रममें पिछले वर्ष कल्याणके विशेषाङ्कके रूपमें श्रीशिवमहापुराणका पूर्वार्ध (विद्येश्वरसंहिता एवं रुद्रसंहिता) श्लोकसंख्यासहित हिन्दीभाषानुवादके साथ प्रकाशित किया गया था, जिसे पाठक महानुभावोंने बहुत सराहा है। इसका उत्तरार्ध भाग (शतरुद्रसंहितासे वायवीयसंहितातक) कल्याणके ९२वें वर्षके विशेषाङ्करूपमें प्रकाशित करनेका निर्णय लिया गया है। इसमें २३५ अध्यायोंमें आये १२४४६ श्लोकोंका श्लोकाङ्कसहित हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया जायगा।

इसकी ४२ अध्यायोंवाली शतरुद्रसंहितामें भगवान् शिवके विभिन्न अवतारोंकी कथाका वर्णन है, साथ ही नन्दीश्वरके जन्मकी कथा तथा कालभैरवके माहात्म्यका भी वर्णन है। कोटिरुद्रसंहितामें ४३ अध्याय हैं। इसमें भगवान् शंकरके द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों तथा उनके उपलिङ्गोंके प्राकट्यकी कथा एवं उनके दर्शन-पूजनकी महिमाका वर्णन है। तदनन्तर इसी संहितामें भगवान् शंकरद्वारा विष्णुको सुदर्शन चक्र प्रदान करनेकी कथा तथा परमकल्याणकारी शिवसहस्रनाम एवं शिवरात्रिव्रतकी कथा, विधि एवं महिमाका वर्णन है। इसकी ५१ अध्यायोंवाली उमासंहिताके प्रारम्भमें भगवान् श्रीकृष्णद्वारा तप करने और शिव-पार्वतीसे वरदानप्राप्तिकी कथा है। तत्पश्चात् भगवती उमाद्वारा विभिन्न अवतार लेकर मधु-कैटभ, धूम्रलोचन, चण्ड-मुण्ड, रक्तबीज, शुंभ-निशुंभ, दुर्गमासुर आदिके वधकी कथा है। कैलाससंहितामें कुल २३ अध्याय हैं। इसमें प्रणवके वाच्यार्थ, संन्यासग्रहणकी शास्त्रीय विधि, शैवदर्शनके अनुसार शिवतत्त्व, जगत्-प्रपञ्च और जीवतत्त्वका विशद वर्णन तथा संन्यासीके अन्त्येष्टिकर्मका वर्णन है। वायवीय-संहिता पूर्व और उत्तर दो खण्डोंमें विभक्त है। इसके पूर्वखण्डमें ३५ अध्याय हैं। इसमें पुराणोंका परिचय, ब्रह्माजीद्वारा परम पुरुष रुद्रकी महिमाका प्रतिपादन, अर्धनारीश्वरस्तोत्र, शैवागम, पाशुपतव्रत और उपमन्युपर शिवकृपाका वर्णन है। इसके उत्तरखण्डमें ४१ अध्याय हैं, जिनमें उपमन्युद्वारा श्रीकृष्णको शिव और शिवाकी विभूतियों, शिवके यथार्थ स्वरूप, शिवज्ञान, पंचाक्षर-मन्त्रके माहात्म्य, शैवी दीक्षा, पंचमुख महादेवकी आवरण पूजा और महास्तोत्र, योगके भेद, योगमार्गके विघ्न, शिवयोगीके महत्त्व आदिका उपदेश दिया गया है। जैसे श्रीमद्भागवतका दशम स्कन्ध भगवान् श्रीकृष्णकी लीलाओंसे ओतप्रोत है, ऐसे ही शिवपुराणका उत्तरार्ध भाग भगवान् शिवकी लीलाओं और उनके भक्तोंकी लीला-कथाओंसे भरा पड़ा है, जैसे भागवतके आचार्य दशम स्कन्धकी कथाओंका ही प्रायः गान करते हैं, ऐसे ही शिवाचार्य भी इन शिवावतारों तथा उनकी आराधनाका वर्णन करते हैं। शिवभक्तगण तो इन संहिताओंको लघु शिवभक्तमाल कहते हैं। ऐसे ही उमासंहितामें मार्कण्डेयपुराणकी तरह भगवती जगदम्बाका कृपामय चरित्र वर्णित है।

इस विशेषाङ्कमें केवल श्रीशिवमहापुराण (उत्तरार्ध)-का भाषानुवाद ही श्लोकसंख्याके साथ दिया जायगा, अतः लेखक महानुभावोंसे सादर अनुरोध है कि वे इस विशेषाङ्कमें प्रकाशनार्थ लेख भेजनेका कष्ट न करें, परंतु शिवपुराणसम्बन्धी कोई विशिष्ट लेख हो तो उसे आगे साधारण अङ्कमें देनेका विचार किया जा सकता है।

विनीत—

राधेश्याम खेमका

गीताप्रेससे प्रकाशित १७ महापुराण—अब उपलब्ध

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
1897	श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण (प्रथम खण्ड) सटीक	२००	789	संक्षिप्त श्रीशिवपुराण—मोटा टाइप	२००
1898	" " " (द्वितीय खण्ड) "	२००	44	संक्षिप्त पद्मपुराण	२५०
26,27	श्रीमद्भागवतमहापुराण (दो खण्डोंमें) "	५००	1183	संक्षिप्त श्रीनारदपुराण	२००
557	श्रीमत्स्यमहापुराण "	२७०	279	संक्षिप्त श्रीस्कन्दपुराण	३२५
48	श्रीविष्णुपुराण "	१४०	1111	संक्षिप्त ब्रह्मपुराण	१२०
1432	श्रीवामनपुराण "	१२५	539	संक्षिप्त श्रीमार्कण्डेयपुराण	९०
1131	श्रीकूर्मपुराण "	१४०	1189	संक्षिप्त श्रीगरुडपुराण	१६०
1985	श्रीलिङ्गमहापुराण	२२०	1361	संक्षिप्त श्रीवराहपुराण	१२०
केवल हिन्दीमें—		२००	631	संक्षिप्त श्रीब्रह्मवैवर्तपुराण	२००
			584	संक्षिप्त श्रीभविष्यपुराण	१८०
1362	श्रीअग्निपुराण—सम्पूर्ण (श्लोकाङ्कसहित)	२००			

श्रीकृष्णजन्माष्टमी एवं श्रीराधाष्टमीपर उपयोगी प्रमुख प्रकाशन

(श्रीकृष्णजन्माष्टमी १४ अगस्त सोमवारको एवं श्रीराधाष्टमी २९ अगस्त मंगलवारको है।)

श्रीकृष्णलीलाका चिन्तन (कोड 571) ग्रन्थाकार— इस पुस्तकमें भगवान् श्रीकृष्णके जन्मसे लेकर बाल तथा पौगण्ड अवस्थाकी विभिन्न लीलाओंका बड़ा ही साहित्यिक, सरस एवं भावपूर्ण चित्रण किया गया है। राजसंस्करणमें अच्छे तथा मोटे कागजपर प्रकाशित यह पुस्तक साहित्यिक मनोभूमिको संस्कारित करनेवाली तथा श्रीकृष्ण-भक्तोंके लिये अनुपम रसायन है। मूल्य ₹ १५०

कन्हैया (कोड 869), गोपाल (कोड 870), मोहन (कोड 871), श्रीकृष्ण (कोड 872)— श्रीमद्भागवतके दशम स्कन्धके आधारपर लिखी गयी चित्रकथाकी इन पुस्तकोंको भगवान् श्रीकृष्णके जन्मसे लेकर उनके परमधामगमनतककी चुनी हुई लीलाओंसे सजाया गया है। प्रत्येकका मूल्य ₹ १५

पदरत्नाकर (कोड 50) पुस्तकाकार— इन पदोंमें भगवान् श्रीकृष्णकी मधुर लीलाओंके चित्रणके साथ ज्ञान, वैराग्य, चेतावनी आदि अनेक विषयोंपर सरल काव्यात्मक प्रकाश डाला गया है। मूल्य ₹ ११०

श्रीराधा-माधव-चिन्तन (कोड 49) पुस्तकाकार— इसमें श्रीराधाकृष्णका अलौकिक प्रेम ही श्रीराधा-माधव-चिन्तनके रूपमें प्रस्फुटित है। भक्ति और शास्त्रीय चिन्तनके अद्भुत समन्वयके साथ यह ग्रन्थ-रत्न सात प्रकरणोंमें विभक्त है। मूल्य ₹ ९०

महाभाव-कल्लोलिनी (कोड 526) पुस्तकाकार— इस पुस्तकमें श्रीराधाकृष्णकी विभिन्न लीलाओंसे सम्बन्धित ११६ पदोंका संग्रह है। मूल्य ₹ ८

मधुर (कोड 343)— इस पुस्तकमें भगवान् श्रीकृष्ण और उनकी अभिन्न शक्ति श्रीराधाजी एवं महाभाग गोपिकाओंके दिव्यातिदिव्य प्रेममय उद्गारोंका ७२ झाँकियोंके रूपमें मनोहर काव्यात्मक चित्रण है। मूल्य ₹ २५

श्रीतुलसी-जयन्तीके अवसरपर पठनीय—तुलसी-साहित्य

कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹	कोड	पुस्तक-नाम	मू० ₹
105	विनय-पत्रिका	४०	108	कवितावली	२०	112	हनुमानबाहुक	५
106	गीतावली	४५	110	श्रीकृष्ण-गीतावली	१०	113	पार्वती-मंगल	५
107	दोहावली	२०	111	जानकी-मंगल	७	114	वैराग्य-संदीपनी एवं बरवै...	४

(श्रीतुलसी-जयन्ती ३० जुलाई रविवारको है।)



COLLECTION OF VARIOUS
-> HINDUISM SCRIPTURES
-> HINDU COMICS
-> AYURVEDA
-> MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with

By
Avinash/Shashi

Icreator of
hinduism
server!

नवीन प्रकाशन—छपकर तैयार

संक्षिप्त पद्मपुराण (कोड 2078) ग्रन्थाकार [गुजराती]—इस पुराणमें भगवान् विष्णुकी विस्तृत महिमाके साथ, भगवान् श्रीराम तथा श्रीकृष्णके चरित्र, विभिन्न तीर्थोंका माहात्म्य, शालग्रामका स्वरूप, तुलसी-महिमा तथा विभिन्न व्रतोंका सुन्दर वर्णन है। मूल्य ₹२६० (हिन्दी भी)

नित्यकर्म-पूजाप्रकाश, सजिल्द (कोड 2075) पुस्तकाकार [नेपाली]—इस पुस्तकमें प्रातःकालीन भगवत्स्मरणसे लेकर स्नान, ध्यान, संध्या, जप, तर्पण, बलिवैश्वदेव, देव-पूजन, देव-स्तुति, विशिष्ट-पूजन-पद्धति, पञ्चदेव-पूजन, पार्थिव-पूजन, शालग्राम-महालक्ष्मी-पूजनकी विधि तथा अन्तमें नित्यस्मरणीय स्तोत्रोंका संग्रह होनेसे यह पुस्तक सबके लिये उपयोगी तथा संग्रहणीय है। मूल्य नेपाली रु० ११०, भारतीय ₹७० (हिन्दी, गुजराती, तेलुगु भी)

आनन्दमय जीवन (कोड 2076) पुस्तकाकार [नेपाली]—मनुष्य अपने-आपमें एक दैवी शक्ति-सम्पन्न आत्मा है। उसके कण-कणमें आनन्दका दिव्य प्रवाह है। डॉ० रामचरण महेन्द्रके ओजस्वी विचारोंके रूपमें संकलित यह पुस्तक आध्यात्मिक पथकी परिचायिका तथा मानव-जीवनमें आनन्दमय वातावरणको विकसित करनेवाली है। मूल्य नेपाली रु० ४०, भारतीय ₹२५ (हिन्दी भी)

असल बन (कोड 2077) पुस्तकाकार [नेपाली]—मानव अपने उद्धार और पतनका दायित्व स्वतः वहन करता है, अतः उसे कर्तव्य-कर्मको शास्त्रोचित ढंगसे सम्पादित करते हुए केवल उत्कट अभिलाषासे परमात्मज्ञान प्राप्तकर जीवनके लक्ष्यको प्राप्त कर लेना चाहिये। प्रस्तुत पुस्तकमें व्यवहार तथा परमार्थ-सम्बन्धी अनेक लेखोंका संग्रह किया गया है। मूल्य नेपाली रु० २०, भारतीय ₹१२ (हिन्दी, अंग्रेजी भी)

पाठकोंके लिये आवश्यक सूचना

1. 'कल्याण' एवं 'गीताप्रेस-पुस्तक-बिक्री-विभाग' की व्यवस्था अलग-अलग है। अतः केवल कल्याणके लिये कल्याण विभागको एवं पुस्तकोंके लिये पुस्तक-बिक्री-विभागको पत्र तथा मनीऑर्डर आदि अलग-अलग भेजना चाहिये। कृपया पत्र-व्यवहारमें अपना मोबाइल नं० एवं ग्राहक-संख्या अवश्य लिखें जिससे आपके पत्रका निस्तारण शीघ्र किया जा सके।

2. कल्याणके पाठकोंकी शिकायतोंके शीघ्र समाधानके लिये कल्याण-कार्यालयमें दो फोन 09235400242/09235400244 उपलब्ध हैं। इन नम्बरोंपर प्रत्येक कार्य-दिवसमें दिनमें 9 बजेसे 12 बजे एवं 1.30 से 4.30 बजेतक सम्पर्क कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त नं० 9648916010 पर SMS एवं WhatsApp की सुविधा भी उपलब्ध है।

3. कल्याणके सदस्योंको मासिक अङ्क साधारण डाकसे भेजे जाते हैं। अङ्कोंके न मिलनेकी शिकायतें बहुत अधिक आने लगी हैं। सदस्योंको मासिक अङ्क भी निश्चित रूपसे उपलब्ध हो, इसके लिये वार्षिक सदस्यता शुल्क ₹ २२० के अतिरिक्त ₹ २०० देनेपर मासिक अङ्कोंको भी रजिस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था की गयी है।

4. कल्याणके मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ सकते हैं।